।। ओ३म् ।।

पाक्षिक

परोपकारी

परोपकारिणी

• वर्ष ६१ • अंक १ • मूल्य ₹१५ महर्षि दयानन्द की स्थानापन्न परोपकारिणी सभा का मुखपत्र • जनवरी (द्वितीय) २०१९

पंजाब केसरी

जन्म
२८ जनवरी १८६५ ई.

लाला लाजपत राय

मृत्यु
१७ नवम्बर १९२८ ई.

भूल सुधार : परोपकारी के पिछले अंक जनवरी प्रथम के आवरण पृष्ठ १ पर आचार्य उदयवीर शास्त्री का जन्म वर्ष भूलवश १९९५ ई. छप गया है, जो कि १८९५ ई. होना चाहिए। पाठकों को हुई असावधानी के लिए खेद है।

ऋषि मेला २०१८ के विभिन्न सम्मेलनों की झलकियाँ

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' (उपप्रधान-परोपकारिणी सभा)

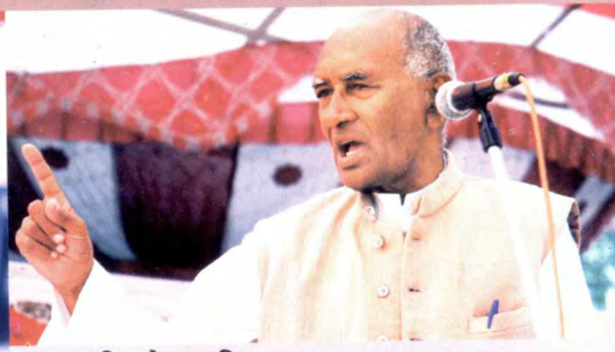

श्री ओम् मुनि (उपप्रधान-परोपकारिणी सभा)

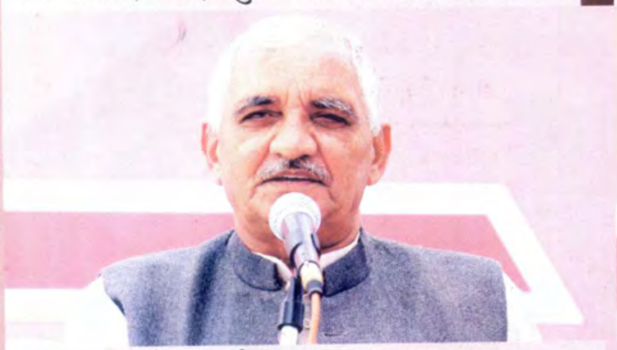

मास्टर रामपाल आर्य (प्रधान-आर्य प्रतिनिधि सभा, हरियाणा)

डॉ. जगदेव विद्यालंकार (रोहतक)

श्री जगदीश शर्मा (प्रबन्ध सम्पादक- दैनिक भास्कर समूह)

ब्र. अरुण 'आर्यवीर'

ब्र. राजेन्द्र आर्य (फरीदाबाद)

श्री श्रुतिशील झंवर (मुम्बई)

महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुख पत्र

वर्ष : ६१ अंक : ०२

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: पौष शुक्ल २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार
९८१८०७२१०८

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाप : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., द्विवार्षिक-३९० रु.
त्रिवार्षिक-५८० रु.
आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

जनवरी द्वितीय २०१९

अनुक्रम

०१. बदली जा रही है 'भारतवर्ष' नाम....	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-२२	डॉ. धर्मवीर	०७
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. गुलामी - एक शाप	लाला लाजपत राय	१५
०५. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		१८
०६. ज. ने. वि. में राष्ट्रवाद की वीणा	विवेकानंद सरस्वती	२०
०७. संस्कारों की वैज्ञानिकता	प्रियवंदा 'वेदभारती'	२३
०८. आधुनिक दिखने की बीमारी	प्रभाकर	२६
०९. शङ्का समाधान- ४१	डॉ. वेदपाल	२९
१०. आर्यसमाज स्थापना की शुद्ध तिथि	विरजानन्द दैवकरणि	३५
११. पाठकों के विचार		३८
१२. मृत्युञ्जय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	४०
१३. आर्यजगत् के समाचार		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएं
www.paropkarinisabha.com →

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

बदली जा रही है 'भारतवर्ष' नाम की व्याख्या

अतीत के साहित्य के इतिहास को पढ़ने पर हमें जानकारी मिलती है कि सोद्देश्य अथवा निरुद्देश्य, ज्ञान से अथवा अज्ञान से शब्दार्थों को बदलने की प्रवृत्ति वैदिक काल से ही मनुष्यों की रही है। ऐसा नास्तिकों और वेद-विरोधियों के द्वारा महाभारत से पूर्वकाल में वैदिक शब्दों के साथ भी किया गया है। तब आचार्य यास्क ने **निघण्टु** एवं **निरुक्त** शास्त्र की रचना कर वैदिक शब्दों के यथार्थ से पाठकों को तर्क-प्रमाणपूर्वक अवगत कराया। **निरुक्त** नामक सत्यार्थबोधक शास्त्र प्रकाश में आने के उपरान्त भी मताग्रहियों की यह प्रवृत्ति रुकी नहीं। पौराणिक असंभव अर्थों के माध्यम से आचार्य सायण ने वेदों का भाष्य करके वेदों को मिथक बना दिया। **उव्वट-महीधर** ने यजुर्वेद का अश्लील भाष्य करके वेदार्थों को घृणास्पद बना दिया। यूरोपीय भाष्यकारों मैक्समूलर आदि ने अनर्गल वेदार्थ करके वेदों के प्रति अश्रद्धा जाग्रत करके ईसाइयत के लिए उर्वर पृष्ठभूमि तैयार करने का षड्यन्त्र किया। महर्षि दयानन्द को वैदिक व्याख्या ग्रन्थों के प्रमाण देकर वेदों के सत्यार्थ को स्पष्ट करना पड़ा, अन्यथा वेदों का मिथ्या अर्थ ही समाज में प्रचलित रहता। महर्षि से प्रेरित होकर आर्यसमाज भी मिथ्या प्रचार-प्रसार को रोकने की दिशा में सतत् प्रयत्नशील रहता है।

गत कुछ समय से कुछ लेखों, वक्तव्यों और समाचार-तन्त्र के माध्यम से जानकारी प्राप्त हो रही है कि कुछ लोगों के द्वारा '**भारतवर्ष**' नाम के स्थापित अर्थ में परिवर्तन करके उसको नया अर्थ देने की दिशा में प्रयास हो रहा है। ऐसा क्यों किया जा रहा है, अभी इस रहस्य का उद्घाटन तो नहीं हो पाया है, किन्तु ऐसा स्पष्टतः हो रहा है। उनकी व्याख्या के अनुसार, '**भारत**' का **अर्थ है-'भा=प्रकाश में, ज्ञान में, रत=संलग्न देश'**। पढ़ने-सुनने में यह व्याख्या बहुत मनभावन लग सकती है, किन्तु तथ्य यह है कि यह नवकल्पित व्याख्या है जो किसी प्राचीन साहित्य और इतिहास में नहीं मिलती, अतः यह इतिहास-विरुद्ध भी है और तथ्य- विरुद्ध भी है। इस व्याख्या के प्रस्तुतीकरण से एक और नये मत का प्रचलन होगा और भारतीय इतिहास का सही स्वरूप नष्ट होगा। जैसे विचारधारा विशेष के आग्रही कुछ लेखकों ने नकारात्मक दिशा में भारतीय इतिहास का परिवर्तन करके उसके सही स्वरूप को नष्ट किया है, उसी प्रकार देश के नाम के अर्थ को बदलना भी इतिहास के सही स्वरूप को विनष्ट करना है, भले ही इसकी दिशा सकारात्मक हो। इस प्रकार के कथनों से ही इतिहास संदेहास्पद बनता है।

वैदिक साहित्य एवं इतिहास हमें जानकारी देता है कि भारत भूभाग का पहला नाम वेदों के आधार पर ग्रहण किये गये मूल नाम '**आर्य**' के आधार पर '**आर्यावर्त**' था, क्योंकि यह आर्यों द्वारा निवसित था और आर्य जन यहाँ विचरण किया करते थे। '**आर्यावर्त**' का शाब्दिक अर्थ है-**आर्य=आर्यों के, आवर्त=निवास एवं विचरण का देश**। आर्यों का समाज भारत और आस-पास के भूभाग पर निवास करने वाला पहला जनसमुदाय था। इसकी पुष्टि पारसी समाज का धर्मग्रन्थ '**अवेस्ता**' भी करता है। '**अवेस्ता**' में वर्णन आता है कि सर्वप्रथम हिमालय-भूभाग में जन-निवास था और उस जन-समुदाय को '**आर्य**' कहा जाता था। उन आर्यों का क्रमिक प्रसार जिन भूभागों में हुआ, ऐसे सोलह देशों की सूची वहाँ दी हुई है। वर्तमान मानव समाज के आदि पुरुष, आदि राजा, आदि धर्मशास्त्र राजर्षि मनु द्वारा रचित आदि धर्मशास्त्र '**मनुस्मृति**' में 'आर्यावर्त' की भौगोलिक सीमा निम्न प्रकार बताई गई है-

आसमुद्रात् तु वै पूर्वात्, आसमुद्रात् तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योः, आर्यावर्तं विदुर्बुधाः।।

(२.२२)

अर्थात्- 'पूर्वी समुद्र (समुद्री क्षेत्र) से लेकर पश्चिमी समुद्री क्षेत्र तक और हिमालय क्षेत्र से लेकर दक्षिण में विन्ध्य पर्वत के क्षेत्र तक का जो भूभाग है, उसको इतिहास के विद्वान् 'आर्यावर्त' के नाम से जानते हैं।'

इस देश का 'आर्यावर्त' नाम वैदिक काल में पर्याप्त समय तक प्रचलित रहा। उसके बाद इसका नाम '**भारत**' अथवा '**भरत खण्ड**' प्रसिद्ध हुआ। प्राचीन काल में इस देश में भरत नाम के दो चक्रवर्ती सम्राट हुए हैं। उनमें प्रथम थे स्वायम्भुव मनु के वंश में उत्पन्न सम्राट् ऋषभ के पुत्र। दूसरे थे सम्राट् दुष्यन्त और शकुन्तला के पुत्र। इस देश का '**भारत**' जो नाम पड़ा, वह ऋषभ के पुत्र सम्राट् भरत के नाम पर पड़ा। यह

स्वायम्भुव मनु के ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत की वंश-परम्परा में सातवीं पीढ़ी में हुआ था। यह राजा अत्यन्त प्रतापी, प्रजापालक, धर्मात्मा और लोकप्रिय हुआ कि उसके द्वारा शासित आर्यावर्त के भरत-खण्ड भूभाग को भारतवर्ष अर्थात् भरत या भरतवंशियों द्वारा शासित देश कहा जाने लगा। सम्राट् ऋषभ द्वारा जब अपने पुत्रों में राज्य का विभाजन किया गया तो उसे आर्यावर्त का भूभाग उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ था। दो प्रमाण उल्लेखनीय हैं-

हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं भरताय न्यवेदयत्।
तस्मात् तत् भारतं वर्षं तस्य नाम्ना विदुर्बुधाः।।

(वायु पुराण ३३.५२)

अर्थात्- 'हिमालय से लेकर दक्षिण का समस्त भूभाग सम्राट् भरत को उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ। उसका शासक होने के कारण उस भाग को भरत के नाम पर 'भारतवर्ष' कहा जाने लगा।'

''येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुणः आसीत्,
येनेदं वर्षं भारतमिति व्यपदिशन्ति।''

(भागवत पुराण ५.४.९)

अर्थात्- 'सम्राट् भरत ऋषभ का ज्येष्ठ पुत्र था, जो गुणों में श्रेष्ठ और महायोगी था। जिसके नाम के आधार पर इस देश का नाम 'भारतवर्ष' रखा गया।' यह भरत प्रजापालक राजर्षि, दयालु और कर्त्तव्यनिष्ठ था तथा यज्ञवेत्ता था। उसके राज्य में प्रजा सुखी और समृद्ध थी। इसकी प्रजा बिना आदेश और दण्ड के भय के स्वयमेव कर्त्तव्यों का पालन करती थी। वृद्धावस्था आने पर इसने अपने ज्येष्ठ पुत्र सुमति को राज्यभार सौंप दिया और स्वयं वानप्रस्थ आश्रम धारण करके ऋषि पुलह के आश्रम में जीवन व्यतीत करने लगा। 'भारतवर्ष' नाम रखने के ये प्राचीनतम राजा के प्राचीन और सर्वप्रथम प्रमाण हैं। अन्य प्रमाण भी उपलब्ध हैं।

(द्रष्टव्य हैं-ब्रह्माण्ड पु. २.१४.६२, विष्णु पु. २.१.३२ आदि)

महाभारत में इस देश के लिए 'आर्यावर्त' और 'भारतवर्ष' दोनों का पर्यायवाची रूप में प्रयोग किया है, जिससे ज्ञात होता है कि उस काल तक 'आर्यावर्त नाम भी प्रचलित रहा। मनु वैवस्वत, इन्द्र, पृथु, ययाति आदि' का 'भारतवर्ष' प्रिय देश कहा है। उससे यह ज्ञात होता है कि यह नाम दुष्यन्त पुत्र भरत से बहुत पहले से व्यवहार में था। देखिए प्रमाण-

क्रमेण व्यतिक्रम्य भारतं वर्षमासदत्।।
आर्यावर्तमिमं देशम्-आजगाम महामुनिः।।

(शान्तिपर्व ३२५.१४, १५)

प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोर्वैवस्वतस्य च।।
सर्वेषामेव राजेन्द्र प्रियं भारत! भारतम्।।

(भीष्मपर्व ९.५-८)

अर्थात्- अपने शिष्यों के साथ महर्षि व्यास सुमेरु पर्वत से चलकर भारतवर्ष में प्रविष्ट हुए।...वे आर्यावर्त देश में आये।। यह भारतवर्ष वैवस्वत मनु, इन्द्र आदि सभी पूर्वज राजाओं का प्रिय देश रहा है।।

भारतवर्ष के नामकरण के विषय में एक अन्य मत भी प्रचलित है कि इस देश का नाम दुष्यन्त पुत्र सम्राट् भरत के नाम पर रखा गया। यह नाम साम्य और इतिहासविषयक समझ की भ्रान्ति से प्रचलित हुआ प्रतीत होता है। महाभारत में इस सम्राट् को भारतवर्ष के सोलह श्रेष्ठ सम्राटों में परिगणित करते हुए इस प्रकार प्रशंसित किया है-

शकुन्तलायां दुष्यन्तात् भरतश्चापि जज्ञिवान्।
यस्य लोकेषु नाम्नेदं प्रथितं भारतं कुलम्।।
भरताद् भारती कीर्तिः येनेदं भारतं कुलम्।
अपरे ये च पूर्वे वै भारता इति विश्रुताः।।

(आदिपर्व २.९६; ७५.१३१)

अर्थात्- 'राजा दुष्यन्त और शकुन्तला से भरत उत्पन्न हुआ। जिसके नाम से भरत का वंश जगद्विख्यात हुआ। उसी के नाम पर 'भारत' वंश नाम हुआ, उसी से भरतवंश की कीर्ति फैली। अन्य राजा पहले से 'भारत' के नाम से प्रसिद्ध थे।'

इन श्लोकों से स्पष्ट होता है कि यहाँ दुष्यन्त पुत्र भरत से भारतवर्ष के नामकरण का उल्लेख नहीं है अपितु भरत का वंश प्रचलित होने का और उसकी ख्याति होने का कथन है। जैसे मनु से 'मानव', कुरु से 'कौरव', पाण्डु से 'पाण्डव', यदु से 'यादव' वंश नाम चले। ऐसे इस भरत से 'भारत' वंश चला। दूसरा तथ्य यह है कि भारतवर्ष के श्रेष्ठ राजाओं में दुष्यन्त पुत्र भरत की गणना की है, उस सूची में उससे पूर्व के भी अनेक राजा हैं। इसका अर्थ हुआ कि इस देश का भारतवर्ष नाम पहले से ही प्रचलित था, जिसके वे श्रेष्ठ राजा थे और

जिसके कारण उन्हें 'भारत' कहा जाता था।

यह भारतवर्ष के नामकरण का प्राचीन ग्रन्थों में प्राप्त इतिहास है। अभी तक उक्त दो मत प्रचलित थे। अब एक तीसरा मत प्रचलित होने लगा है। इससे यह संकेत मिलता है कि तीसरे मत का आरम्भ करने वालों को भारत के स्थापित इतिहास का ज्ञान नहीं है, इस कारण वे तुक्का चला रहे हैं; अथवा वे किसी भावना के आग्रहवश जानबूझ कर इतिहास-विरुद्ध व्याख्या प्रचलित कर रहे हैं।

सम्राट् भरत के नाम पर आधारित 'भारतवर्ष' नामकरण के अर्थ-परिवर्तन की पृष्ठभूमि में एक संभावना यह प्रतीत होती है कि कुछ लोगों का यह आग्रह बन रहा हो एक वैदिक राजा के नाम के आधार पर किसी देश का नामकरण क्यों हो जबकि उस देश में अन्य अनेक राजा और अनेक वंश के लोग भी रहते हैं। ऐसी संकीर्ण विचारधारा मन में पालने वाले लोगों को दो तथ्यों को स्मरण कर लेना चाहिए। **प्रथम**- संस्कृत युग में राजा के वंशज और उसकी प्रजाएँ, दोनों ही अपने राजा या प्रमुख व्यक्ति का वंशनाम धारण करती थीं, जैसे **राजा अग्रसेन** के वंशज और उसकी प्रजाएँ सभी स्वयं को **'अग्रवाल'** समुदाय के अन्तर्गत मानकर यह नाम धारण कर रही हैं। **दूसरा** -कोई भी नामकरण किसी व्यक्ति, स्थान, परिस्थिति और जन-समुदाय के वर्चस्व एवं प्रमुखता के आधार पर रख दिया जाता है जो वहाँ रहने वाले अन्य जनों द्वारा भी स्वीकार्य बन जाता है। ऐसी परम्पराएँ देश और विदेशों में भी हैं। यवनों ने **'भारत'** का **'हिन्दुस्तान'**, **'हिन्द'** नामकरण सिन्ध नदी और प्रदेश के आधार पर किया, जो फारसी में 'स' का 'ह' उच्चारण होने से हुआ। वही 'ह' का 'इ' उच्चारण-भेद होकर यूरोपीय भाषा में **'इंडिया'** हो गया। जबकि भारत में अकेली सिन्ध नदी या सिन्ध प्रदेश ही नहीं था, अनेक प्रमुख नदियाँ और अन्य प्रदेश थे और हैं। फिर भी यह नाम सबको उदारता से स्वीकार्य हुआ। **'गुजरात'** गुर्जर राजाओं के शासन के आधार पर रखा गया, किन्तु वहाँ गुर्जरों के अतिरिक्त सभी समुदाय रहते हैं। बिहार (विहार) बौद्ध विहारों की प्रधानता के आधार पर रखा गया, आज वहाँ विहारों का अस्तित्व नहीं है। 'आन्ध्र' नामकरण अन्ध्र जन-समुदाय की प्रमुखता के कारण रखा गया, वहाँ अन्य जन भी निवास करते थे और हैं। ये स्थापित नाम अब भी स्वीकार्य हैं। विदेशों में भी थाईलैण्ड, स्कॉटलैण्ड, आयरलैण्ड, अफगानिस्तान आदि नाम विशेष समुदाय के आधार पर हैं, जो स्वीकार्य बने हुए हैं। स्थापित नाम और उसके अर्थ में असहमति उत्पन्न करना संकीर्ण मनोवृत्ति का द्योतक माना जायेगा। जो नाम और अर्थ स्थापित है तथा प्राचीन इतिहास द्वारा पुष्ट है उसको स्वीकार करना ही राष्ट्रीय सद्भावना एवं एकता का द्योतक है। नये मत का अर्थ कितना ही मनभावन प्रतीत होता हो, उससे प्राचीन भारतीय इतिहास की प्रामाणिकता में एक और सन्देह का बीजवपन ही होगा, अत: त्याज्य है।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

सामवेद पारायण महायज्ञ

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द उद्यान जमानी, इटारसी का वार्षिकोत्सव दिनांक १ से ३ मार्च २०१९ को सामवेद पारायण यज्ञ के साथ आयोजित किया जा रहा है, जिसमें आर्यजगत् के मूर्धन्य विद्वानों के वेदोपदेश का सुअवसर प्राप्त होगा। परोपकारिणी सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल, उपप्रधान श्री ओम मुनि, मन्त्री श्री कन्हैयालाल आर्य, भजनापदेशक पं. भूपेन्द्र सिंह एवं पं. लेखराज आदि उपस्थित रहेंगे। बाहर से पधारने वाले अतिथियों के आवासादि की व्यवस्था आश्रम की ओर से ही रहेगी।

परोपकारिणी सभा का यह संस्थान मध्यप्रदेश के आदिवासी क्षेत्र में आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार करने में संलग्न है। आर्यजन पधारकर एवं अधिकाधिक सहयोग देकर इसे और अधिक गति प्रदान करें।

निवेदक

परोपकारिणी सभा, अजमेर

महर्षि दयानन्द उद्यान, जमानी, इटारसी (म.प्र.)

सम्पर्क- ०७५७०९७०६८२८, ९४२५०४०३१०

मृत्यु सूक्त-२२

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

**मृत्यो पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः।।**

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। - सम्पादक

ऋग्वेद के दसवें मंडल के १८ वें सूक्त की चर्चा के प्रसंग में जो मन्त्र हमारे सामने है, वो कहता है-

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः कि यह जो आयु है इसको हम बड़ा कर सकते हैं, लम्बा कर सकते हैं। जन्म और मृत्यु के बीच का अन्तराल कहीं छोटा है, कम है, कहीं लम्बा है। अगर सबका एक सा होता तो एक वर्ष में सब मर जाते, एक सौ वर्ष में मर जाते, पाँच सौ में मरते, तो फिर हमें इस चिन्ता की आवश्यकता नहीं थी कि जन्म और मृत्यु के अन्तर को हम बढ़ा या घटा सकते हैं।

हममें से किसी को यह नहीं पता कि हमको कौन-सा शरीर मिलेगा, कितने दिन के लिए मिलेगा, कौन-सी सुविधाओं के साथ मिलेगा, बस मिल जाता है और वो सुविधाएं भी उसके साथ ही हमें प्राप्त होती दिखाई देती हैं। ये सुविधाएं सबको मिलीं हैं, अन्तर यह दिखाई देता है कि मिली तो हैं, पर एक जैसी नहीं हैं। एक जैसी इसलिए नहीं हैं कि यह फल है कर्म का-जाति, आयु, भोग का। जाति, आयु, भोग फल है तो सबको एक जैसी जाति भी नहीं मिलेगी, सबको एक जैसी आयु भी नहीं मिलेगी, सबको एक जैसे सुख-दुःख भी नहीं मिलेंगे। क्योंकि वह परिणाम है, तो जिसका जैसा कार्य होगा, जिसकी जैसी उपलब्धि होगी, उसको वैसा फल मिलेगा।

इससे एक बात यहाँ सिद्ध होती है कि जन्म-मृत्यु के बीच का अन्तराल घट और बढ़ सकता है और इसको लेकर एक बहुत शास्त्रीय विवाद हमारे लोगों में चलता है कि मृत्यु काल मृत्यु है या अकाल मृत्यु है। कोई मार दे तो मर जाता है या मरना है इसलिए मर गया? इसको लेकर बहुत शास्त्रार्थ होते हैं, बड़ी लम्बी चर्चायें होती हैं। लेकिन आचार्य चरक का कहना है कि काल और अकाल का अभिप्राय क्या है? जब आपको कोई वस्तु दी जाती है, जैसे आप कारखाने से बनी कोई वस्तु लाते हैं तो उसका एक सामान्य काल होता है कि यह गाड़ी आपने आज खरीदी है और यह नियमित इतनी चलती रही और आप सावधानी से चलाते रहे, आप दुर्घटना में नहीं पड़े तो यह आराम से इतने साल चल जाएगी। दस साल चलेगी, बीस साल चलेगी। लेकिन इस गाड़ी को यदि किसी दुष्ट हाथों में, अशिक्षित हाथों में दे दिया जाए तो वह साल भर में खत्म कर सकता है और कहीं दुर्घटनाग्रस्त कर दे, कहीं पहाड़ से गिरा दे, कहीं गड्ढे में डाल दे, किसी से टक्कर मार दे तो वह एक दिन में भी समाप्त कर सकता है। काल और अकाल का केवल इतना अभिप्राय है कि इसको सामान्य रूप से कितने समय तक चलना चाहिए और अकाल का इतना अभिप्राय है कि जितने समय तक चलना चाहिए था, जितनी सुविधाओं के साथ आए थे, उतने तक नहीं चले। नहीं चलने के कारण हुए तो वह अकालता हो जाती है। कहा गया है-

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः कि हम आयु को बढ़ा सकते हैं।

शरीरेन्द्रिय सत्वात्मा संयोगोधारी जीवितम्।

शरीर है, मन है, इन्द्रियाँ है, आत्मा है, इनका मेल, इनका संयोग, इनका इकट्ठा होकर काम करना जीवन है। इकट्ठा हुए बिना इनका कोई काम नहीं हो सकता। यह जीवन है और यह जीवन घटता है, बढ़ता है, क्यों? क्योंकि जिन वस्तुओं से यह शरीर बना है उनके यथोचित्

प्रयोग से देर तक बना रह सकता है। अनुचित या गलत प्रयोग से बना नहीं रह सकता। इसलिए जो चिकित्सा का शास्त्र है उसमें आयु बढ़ाने के उपाय बताए जाते हैं। आयु की परिभाषा करते हुए चरक ने एक स्थान पर लिखा है कि यह आयुर्वेद है क्या?

हिताहितं सुखं दुःखं आयुस्तस्य हिताहितं।
मानं च तच्च यत्रोक्तं आयुर्वेदः स उच्यते।
हितायु-अहितायु, सुखायु-दुःखायु और मानम्

ऐसा रहोगे तो ठीक रहोगे, ऐसे रहोगे तो सुखी रहोगे। हित का अर्थ है कल्याण, परिणाम में अच्छा होना। सुख का अर्थ है वर्तमान का अच्छा होना। हम सो रहे हैं, वर्तमान में हैं, लेकिन सोने का हमें आयु में लाभ मिले, आयु के बढ़ने का कारण बने, आलस्य प्रमाद का कारण न बने।

इस दृष्टि से हम जब विचार करते हैं कि बढ़ने की संभावना है तो घटने की संभावना भी अपने आप बन जाती है और घटने की संभावना है तो बढ़ने की संभावना भी अपने आप बन जाती है। किसी को जल्दी मरते हुए देखकर किसी के देर से मरने की बात और किसी को देर से मरते हुए देखकर जल्दी मरने की बात समझ में आती है। आयु को आप बढ़ा सकते हैं, कैसे बढ़ा सकते हैं तो कहता है कि इसके बिगड़ने का क्या कारण है? इसके बिगड़ने का तो एक ही कारण है, इसके अन्दर विकृति आ जाना, इसके अन्दर मलिनता आ जाना, इसके अन्दर खराबी आ जाना। जो व्यक्ति इसको सुधार कर रखते हैं, अच्छा बनाकर रखते हैं, पवित्र करके रखते हैं, वो इसे ठीक रख सकते हैं।

शरीर को अच्छा रखने के जो साधन हैं, जो पदार्थ हैं, उनके गुण-दोषों के आधार पर वात-पित्त-कफ के रूप में हमने बाँटे हैं। यह शरीर बना तो वात-पित्त-कफ से है, इनकी विकृति से यह शरीर विकृत हो जाता है, इनकी प्रकृति से यह शरीर बन जाता है। इसलिए यह जो शरीर में वात-पित-कफ है इनकी स्थिति 'सम' होनी चाहिए। न कोई कम होना चाहिए ना कोई अधिक होना चाहिए।

'वातः पित्तः कफश्चेति शरीरो दोष-संग्रहः'।

शरीर में ये तीनों समान होने चाहिएं और केवल यही नहीं, आयुर्वेद में तो स्वास्थ्य की परिभाषा ही बड़ी विचित्र है। वो कहते हैं इस शरीर में जो भी कुछ है, वह 'सम' होना चाहिए।

'समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः
प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः स्वस्थ इत्यभिधीयते।'

-सुश्रुत

आजकल की परिभाषा में स्वास्थ्य की जब परिभाषा करते हैं तो कहते हैं कि इतनी नाड़ी-गति है, इतना रक्तचाप है, इतनी श्वास की गति है, इतनी हृदय की गति है, इतनी ऊँचाई है और इतना वजन है तो आदमी स्वस्थ है। लेकिन आयुर्वेद में ऐसी परिभाषा नहीं है। वो कहते हैं-

समदोषः समाग्निश्च समधातुमलक्रियः

अर्थात् शरीर के जो दोष हैं वो सम हों। शरीर की जो अग्नियाँ हैं वो भी कम-अधिक न हों। शरीर के मल-विसर्जन की, अन्न के ग्रहण की मात्रा भी सम हो। **प्रसन्नात्मेन्द्रियमनः**-मन, आत्मा, इन्द्रियों में प्रसन्नता हो, उत्साह हो, वो व्यक्ति स्वस्थ है, अपने आप में बड़ा महत्त्वपूर्ण है। **स्वस्मिन् तिष्ठति**- अपने आप में ठीक है, पूरा है, कोई आवश्यकता नहीं है। आप कम हैं तो आवश्यकता है, आप अधिक हैं तो निकालने की आवश्यकता है। ना तो कम है, ना अधिक है, तो सम होगा। वो व्यक्ति स्वस्थ है, जिसके अन्दर प्रसन्नता है, जिसकी इन्द्रियाँ भी प्रसन्न हैं, जिसका आत्मा भी प्रसन्न है, जिसका मन भी प्रसन्न है। शरीर को ठीक रखने के लिए जिस चीज का विधान है, वो वात-पित्त-कफ है, लेकिन मन को जिस बात से ठीक रखते हैं, इन्द्रियों को जिस बात से ठीक रखते हैं, वो क्या है? है तो वही लेकिन वो और अधिक सूक्ष्म है। उसका नाम है सतो गुण, रजो गुण, तमो गुण। हम शरीर को बढ़ाने के लिए सीधे वस्तु का उपयोग करते हैं, कफ की कमी है, हम दही का उपयोग करते हैं। हमारे अन्दर वात बढ़ गया है, घी का उपयोग करते हैं। हमको अग्नि की तीव्रता करनी है, घी का उपयोग कर लेते हैं। ये वस्तुएँ शरीर के साथ जुड़ी हुई हैं, लेकिन इन वस्तुओं के अन्दर जो प्रभाव है, इन वस्तुओं से जो चीज़ हमको मिलती है, वो है, सतो गुण, रजो गुण और तमो गुण। इसलिए किसी वस्तु को खाने से तमो गुण बढ़ता है, नींद अधिक आती है, किसी वस्तु को खाने से उत्साह अधिक बढ़ता है, शरीर में हल्कापन

आता है। किसी वस्तु से हमारे अन्दर कोई चीज तीव्रता करने लगती है, कोई तेज चीज़ खाने से रक्त में ऊष्मा बढ़ जाती है, संचार की गति तीव्र होने लगती है, हृदय अधिक धड़कने लगता है, यह जो परिस्थिति है वह सतो गुण, रजो गुण, तमो गुण कहलाती है।

इसलिए हमारे शरीर पर जो दो तरह का प्रभाव पड़ता है-सीधे वस्तु के उपयोग से शरीर पर प्रभाव पड़ता है और वस्तु के गुण धर्म से हमारे मन, इन्द्रिय, बुद्धि पर प्रभाव पड़ता है और मन, बुद्धि, इन्द्रियों को ठीक रखता है। शरीर को ठीक रखना है तो हमें दोनों के लिए ऐसे पदार्थों का उपयोग करना होगा जो इनमें समता पैदा कर सकें। इसलिए शास्त्रकार यह कहते हैं-यदि आप सतो गुण, रजो गुण, तमोगुण में, वात-पित्त-कफ में साम्य रख सकते हैं तो आप अपनी इस आयु को बढ़ा सकते हैं। स्थूल शरीर में जो पवित्रता होगी, उससे शरीर की आयु बढ़ेगी। तो जैसे इस स्थूल शरीर की पवित्रता से इस शरीर की आयु बढ़ती है, स्वास्थ्य बढ़ता है, वैसे ही मन, बुद्धि, इन्द्रियों की पवित्रता से उनकी क्षमता और उनकी योग्यता भी बढ़ती है, इसलिए कि उनके अन्दर सतो गुण, रजोगुण, तमोगुण की सम स्थिति होती है। इन्द्रियों के अन्दर, मन के अन्दर, हमारी बुद्धि के अन्दर सदा सतो गुण हो, ऐसा हमारा प्रयत्न रहता है, रहना चाहिए। तो इस दृष्टि से जब आप विचार करते हैं तो इनका उचित उपयोग करने से, इसको समझने से इस शरीर की आयु को हम बढ़ा सकते हैं और मन, बुद्धि, इन्द्रियों के उत्तम स्वास्थ्य के द्वारा भी इनकी योग्यता को बढ़ा सकते हैं। तो

मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राधीय आयुः प्रतरं दधानाः

मन्त्र कह रहा है कि जो आयु आपके पास है, आप इसको '**प्रतरं दधानाः**' ज्यादा विस्तार दे सकते हैं और वो विस्तार तभी दिया जा सकता है, जब इसके अन्दर पवित्रता का समावेश हो, योग्यता का समावेश हो, औचित्य का समावेश हो। इसलिए यहाँ पर कहा है कि जो व्यक्ति, मन-बुद्धि को पवित्र रखता है और शरीर को ठीक रखता है वह अपनी आयु को लम्बा कर सकता है।

एक आहुति अपने आचार्य के लिए........

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गौशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की निःशुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें। **- मन्त्री**

जब तक सबकी रक्षा करने वाला धार्मिक राजा वा आप्त विद्वान् न हो तब तक विद्या और मोक्ष के साधनों को निर्विघ्नता से पाने के योग्य कोई भी मनुष्य नहीं होता है और न मोक्ष सुख से अधिक कोई सुख है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५२

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु

महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों की विश्वव्यापी विजय- एक सज्जन ने हमसे पूछा, "महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व तथा ऋषित्व की विलक्षणता एवं महानता का कोई अकाट्य प्रमाण दीजिये।"

उन्हें कहा गया कि प्रमाण तो एक नहीं अनेक दे देते हैं, परन्तु मतान्ध, पक्षपाती, विरोधी फिर भी ऋषि का उपकार नहीं मानेंगे। ईसाई, मुसलमान और मूर्त्तिपूजक हिन्दू सभी उस ऋषि को कोसना बन्द नहीं करेंगे। पूज्य पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय जी कहा करते थे, "गुड़ का स्वाद लेते जाओ और गन्ने को कोसते जाओ।" पन्थाई लोग जो आज पर्यन्त ऋषि की निन्दा करते चले आ रहे हैं इनमें से कौनसा वर्ग जो महर्षि के उपकारों तथा सुविचारों से लाभान्वित होने से उसका ऋणी नहीं है।

१. संसार के करोड़ों ईसाई यही मानते थे कि सृष्टि की उत्पत्ति से पूर्व न तो प्रकृति (matter) था और न ही आत्मा (spirit) का कोई अस्तित्व था। केवल परमात्मा था और परमात्मा का आत्मा पानियों पर डोल रहा था। परमात्मा का ठौर ठिकाना कहाँ था? परमात्मा ने प्रकृति को उत्पन्न किया और जीवों को बचाया।

२. संसार के करोड़ों मुसलमान दिन-रात 'कुन' (हो जा और हो गया) की रट लगाये जा रहे थे। यह matter (प्रकृति) और जीवात्मायें कहाँ से कूद पड़े? आज कुन (हो जा) कहने से कोई मुसलमानी देश, कोई मौलवी अथवा वैज्ञानिक कोई कल-कारखाना तो खड़ा कर दिखावे। सृष्टि-नियम बिना उपादान कारण के किसी वस्तु के निर्माण को सहन नहीं कर रहा।

३. करोड़ों तिलकधारी, मायावादी, मूर्त्तिपूजक हिन्दू जगत् को मिथ्या कहते चले आ रहे थे। एक ब्रह्म की ही सत्ता थी। न जीव थे और न जगत् या प्रकृति थी।

४. कुछ ऐसे मत थे जो भगवान् को नहीं मानते थे, वे केवल प्रकृति की सत्ता को मानते थे।

५. दिन-रात, स्वर्ग, नरक, बहिश्त व दोज़ख की कहानियाँ सुनाने वाले न heaven (स्वर्ग), न hell (नरक) का अता-पता बता सके और बातें आगे की छोड़कर हम महर्षि की महानता, विलक्षणता व देवत्व का बोध करवाते हैं, कोई झुठलाकर तो दिखावे। क्या आज सब मुस्लिम, ईसाई देशों के सब विश्वविद्यालयों में-

१. प्रकृति (matter) को अनादि व अनश्वर माना जाता है या नहीं matter can neither be created nor it can be destroyed इस सत्य सिद्धान्त का डंका ऋषि जी ने चाँदापुर, जालन्धर, रुड़की, उदयपुर, मुम्बई में बजाया व पादरियों तथा मौलवियों से मनवाकर दिखाया या नहीं? अलीगढ़, कराची, तेहरान, लंदन, न्यूयॉर्क, हैदराबाद या कहीं भी कोई अब कहे तो स्वामी दयानन्द का कथन प्रकृति नित्य है, अनादि है सब मिथ्या है।

२. हिन्दुत्ववादी जो शंकराचार्य जी के नवीन वेदान्त का ढोल पीट रहे थे वे अब मालवीय जी के काशी नगर में विश्वविद्यालय में कहें कि जगत् मिथ्या है। केवल ब्रह्म है और कुछ नहीं। सन् २०१९ के चुनाव सिर पर हैं। चुनाव मत लड़ना। यह सपना है। सब मिथ्या है। नये नींव, पत्थर रखना व उद्घाटन करते जाना, क्या यह सब सत्य है या मिथ्या है? देश के उपकार, सुधार की योजनायें ये सत्य हैं या मिथ्या हैं?

३. काशी में मालवीय जी के जीवन के अन्तिम दिनों में एक आर्य युवती कल्याणी देवी को एम.ए. धर्म-विज्ञान में वेद पढ़ाने पर मूर्त्तिपूजक ब्राह्मणों ने विवाद खड़ा करवा दिया। कारण, कल्याणी देवी स्त्री होने के कारण वेद पढ़ने की अधिकारी नहीं थी। तब मालवीय जी मौन रहे। डॉ. राधाकृष्णन् जी तब वी.सी. (उपकुलपति) थे। वे भी मौन रहे। जीत ऋषि दयानन्द की हुई। वेद पढ़ाना पड़ा। चालाक जन्माभिमानी ब्राह्मणों के हठ से आर्यसमाज बाजी जीतकर भी हार गया। कल्याणी देवी के पश्चात् वह पठन-पाठन की सब नियमावली निरस्त कर दी गई। न रही वह कक्षा और न स्त्रियों का उसमें प्रवेश।

४. अब उसी काशी में आर्यसमाज के कन्या गुरुकुल में आचार्य सूर्यादेवी जी सरीखी सैकड़ों देवियाँ वेद अध्ययन

कर- करके पीएच.डी. करती जा रही हैं। माना लोहा जन्माभिमानियों ने ऋषि दयानन्द का, स्वामी श्रद्धानन्द का, पं. लेखराम का, स्वामी स्वतन्त्रानन्द का। डॉ. राधाकृष्णन् जी ने ऋषि जी का, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का और पं. धर्मदेव जी का नामोल्लेख किये बिना Religion and Society पुस्तक में उस समय जो-जो तर्क प्रमाण स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने दिये वे सब मालवीय जी ने इस पुस्तक में स्वीकार किये या नहीं? मोदी जी की यह विवशता है कि वह अपने वोट बैंक काशी के ब्राह्मणों के दबाव में आर्यों के कन्या गुरुकुल में गत साढ़े चार वर्ष में पैर नहीं रख सके, परन्तु वह ऋषि के सिद्धान्त, स्त्रियों के अधिकार का विरोध भी तो नहीं कर सके। मित्रो! यह विषय लम्बा है। एक नई शैली से हम इस विषय पर पुस्तक लिखना चाहते हैं। देखिये! प्रभु इच्छा-

महान् मनीषी चमूपति की हुंकार सुनिये-

जुग बीत गया दीन की शमशीर ज़नी का।
है वक्त दयानन्द शज़अत (शूरता) के धनी का।।

महर्षि दयानन्द पर घिनौना वार- आचार्य ओमप्रकाश जी गुरुकुल आबू के पिताजी ने चलभाष पर हमें पुरी के शंकाराचार्य जी के फेसबुक या ऐसे किसी साधन से महर्षि दयानन्द पर किये गये घिनोने वार-प्रहार का प्रतिकार करने को कहा है। उन्होंने उसका कथन हमें सीधा न भेजकर अजमेर भेज दिया है। उनकी बात का सार जो समझ पाया उस पर अपनी प्रतिक्रिया व संक्षिप्त उत्तर ही अभी यहाँ दिया जाता है। उस कथन या लेख की पूरी प्रतिलिपि मिलने पर विस्तार से लिख देंगे। आर्यसमाज का संगठन, सभायें, सरकार या सत्ता के स्वागत, सम्मान व संस्थाओं के झमेले में उलझा है। इनके मौन से लगता है कि आर्यसमाज का अस्तित्व ही नहीं। चिन्ता की बात नहीं,

ज़रा छेड़े से मिलते हैं मिसाले ताले तम्बूरा,
मिला ले जिसका जी चाहे बजा ले जिसका जी चाहे।।

कभी गुरुकुल आर्यसमाज के सुदृढ़ दुर्ग थे। अब गुरुजी तो गुरुकुलों में मिलेंगे। आचार्यों के दर्शन भी होते हैं, परन्तु स्वामी वेदानन्द जी, चमूपति जी, रुद्रानन्द स्वामी को नयन खोज रहे हैं। वे कहाँ गये?

शंकाराचार्य जी का कहना है कि स्वामी दयानन्द ने पत्थर-पूजा का खण्डन अंग्रेज़ों के दबाव या प्रेरणा से किया।

ऐसा लिखते व कहते समय पुरी के शंकराचार्य ये बताना तो भूल ही गये कि परापूजा का प्रारम्भ आदि शंकाराचार्य ने क्या इंग्लैण्ड के किसी सम्राट् की प्रेरणा से किया था अथवा सातवें आसमान से उतरे किसी फ़रिश्ते ने उसके कान में यह फूँक मारी दी थी?

महात्मा कबीर, गुरुनानक व दादूजी ने मूर्त्तिपूजा का जो निषेध किया, वह क्या मुसलमानों के दबाव वा प्रभाव से किया अथवा वेद शास्त्र के प्रभाव के संस्कारों से?

श्री गुरुनानक की एक ओंकार की हुंकार, अवतारवाद के खण्डन, ईश्वर की सर्वव्यापकता का मूल आप आर्य धर्म में मानते हैं अथवा इसका श्रेय इस्लामी तलवार को देते हैं? स्वामी विवेकानन्द जी ने भी मूर्त्तिपूजा का खण्डन करके पुण्य लूटा। यह रामकृष्ण मिशन से प्रकाशित उनकी जीवनी में पढ़ लें। यह मैक्समूलर का दबाव था या अमेरिका का? कुछ यह भी तो बता देते? स्वामी विवेकानन्द जी ने जीवन की साँझ में ढाका में जो भाषण दिया, उसमें पुराणों की धज्जियाँ उड़ा दीं। पौराणिक कहानियों को गप्पें बताया। वेद की महिमा में वही कुछ कहा जो ऋषि दयानन्द ने लिखा व कहा।

शंकराचार्य जी बतायें कि स्वामी विवेकानन्द जी का यह भाषण क्या अमेरिकनों की छाप था या महर्षि दयानन्द के सिंहनाद का प्रभाव था, अथवा इसे आप **जगत् मिथ्या** के अन्तर्गत लेते हैं?

महर्षि दयानन्द जी ने भारत में पहली बार पादरियों को, मौलवियों को चाँदापुर के शास्त्रार्थ में धूल चटाई। हिन्दुओं के किसी आचार्य ने, पण्डित ने उनको कभी चुनौती न दी? हिन्दुओं ने पहली बार ऋषि दयानन्द के सामने पिटकर उन्हें पीठ दिखाकर भागते देखा। यह राधास्वामी मत के तीसरे गुरु हजूर जी महाराज ने लिखा है। जगत्गुरु होने का अभिमान करने वाले बाबा जी, पराकीय मतों को जो ऋषि ने पराजित किया यह आपके अंग्रेज़ों की सहायता व कृपा से हुआ अथवा सच्चिदानन्द परमात्मा की कृपा से व ऋषियों के पुण्य-प्रताप व प्रेरणा से हुआ?

जब गोरा पादरी जोसेफ़ कुक सात समुद्र पार भगाया- श्रीमान् शंकराचार्य जी! तनिक आर्य जाति के

गौरवपूर्ण इतिहास का वह पृष्ठ उठाकर पढ़ने व बताने का कष्ट करें कि सन् १८८२ में एक गोरे पादरी ने कोलकाता, मुम्बई आदि नगरों में ईसाई मत को विश्व का आगामी धर्म बनाने व बताने की घोषणा अपने धुआँधार भाषणों में की थी, तब सारे शंकराचार्य कहाँ सोये-खोये पड़े थे? ऋषि दयानन्द ने उसे ललकारा तो वह सात समुद्र पार भाग खड़ा हुआ। ऋषि दयानन्द के इस शौर्य का प्रेरक आप पोप को, किसी बिशप को, गोरी सरकार को मानते हैं या प्रभु के सद्ज्ञान वेद को?

हमारा अन्तिम प्रश्न है कि जगत् को आप झूठ, मिथ्या बताते हैं। जब जगत् मिथ्या है तो जाति-पाँति भी मिथ्या है, फिर शंकराचार्य की गद्दी पर जन्म का ब्राह्मण ही क्यों बैठता है? क्या ऐसे समय जाति-पाँति व जगत् सत्य हो जाता है? जगत् को आप मिथ्या मानते हैं तो फिर झूठे गुरु हैं या झूठ का प्रचार करने वाले गुरु हैं।

पंजाब में विस्तृत समाचार छपा है- महासम्मेलन करने वाला आर्यसमाज स्वामी श्रद्धानन्द जी के जन्म स्थान में दैनिक व साप्ताहिक सत्संग भी कभी नहीं करता। उनका बलिदान पर्व मनाने भी आर्यसमाज की अरबों की सम्पत्ति के स्वामी कब्ज़ाधारी सेठ लोग जालन्धर से कभी तलवन नहीं जा पाते। गत वर्ष व इस वर्ष भी हरियाणा के हमारे परमोत्साही आर्यवीर श्री अभय आर्य ने अपनी टोली लेकर स्वामी जी का बलिदान पर्व धूमधाम से मनाया। राजपुरा, नूरमहल की देवियों व पुरुषों का तथा गुरुकुल करतारपुर का प्रशंसनीय सहयोग मिला। दैनिक भास्कर के संवाददाता ने वहाँ के समाचार पत्र में अपनी प्रतिक्रिया विस्तार से दी है। सम्पूर्ण आर्य जगत् को झकझोरा है। हम अपने आर्यवीरों का हृदय की गहराइयों से अभिनन्दन करते, यदि यह सेवक रुग्ण न होता तो उनके संग वहाँ की यात्रा करता।

यह दल चौधरी चरणसिंह जी के ग्राम जाकर वेद प्रचार करके आर्य नेता चौधरी चरण सिंह जैसे लोकनायक की भी धूम मचा कर आया है। ऐसे सहस्रों दीवाने चाहिये। फेसबुक आदि साधनों से प्रचार तो होता है, परन्तु संगठन व जीवन निर्माण तो व्यक्तिगत सम्पर्क से ही सम्भव है।

एक नई परम्परा- मेरे एक पुराने शिष्य आर्य युवक समाज लेखराम नगर (कादियाँ) के प्रो. रमेश कुमार जी वैदिक मिशनरी अमेरिका तथा देवनगर हरियाणा के आर्यवीरों ने इस विनीत द्वारा लिखित अब तक का सबसे बड़ा तथा सर्वथा मौलिक ग्रन्थ **स्वामी श्रद्धानन्द जीवन यात्रा** के प्रकाशन का ऐतिहासिक कार्य कर दिखाया। रमेश जी अमेरिका से भारत आये। अबोहर तो आये ही, मेरे निवेदन पर अजमेर भी गये। आपने प्राचार्य रमेश जीवन जी को चण्डीगढ के पंचकूला आर्यसमाज, कादियाँ तथा दीनानगर में इसके लोकार्पण का कार्य सौंपा। पंचकूला में पंजाब के सेवानिवृत्त मु. अभियन्ता श्री सुशील बाली ने इसका लोकार्पण करना था। वह हमारे पुराने विद्यार्थी हैं। वह इन दिनों अमेरिका गये हैं। जीवन जी ने हमारे युवक समाज के पुराने आर्यवीर और पुराने विद्यार्थी, उन्हीं के भाँजे प्रिय नानक से इसका लोकार्पण करवाया। श्री अनिवाश आदि कादियाँ के कई पुराने आर्यवीर वहाँ उपस्थित थे। यह एक नई परम्परा है। कादियाँ में लोकार्पण की तिथि जीवन जी ही बतायेंगे।

कभी किसी से टक्कर ली?- अपने आपको बीसियों पुस्तकों का लेखक, इतिहासज्ञ, स्कॉलर प्रचारित करने वाले किसी सूची पण्डित ने गत ४०-५० वर्षों में विधर्मियों के वार-प्रहार का प्रतिकार नहीं किया। एक ट्रैक्ट नहीं लिखा। किसी को चुनौती दी क्या? यह जीवन का चिह्न नहीं, मरण का, कायरता का प्रमाण है। कोई राजनीतिक दल आर्यसमाज का गौरव नहीं सह सकता। सब पत्थर पूजा, जल-स्थल, जड़ की उपासना करने वाले हैं। दिल्ली के सनातनधर्मी नेता, विद्वान् पं. गंगाप्रसाद जी शास्त्री ने लिखा है कि जब पादरी नीलकण्ठ शास्त्री प्रयाग, हरिद्वार, काशी आदि तीर्थों पर कुम्भ मेले पर सहस्रों हिन्दुओं को ईसाई बनाता रहा, तब वहाँ के ब्राह्मण उसका सामना न कर सके। यह तो महर्षि दयानन्द ही था जिसने उसकी बोलती बन्द कर दी और वह भाग खड़ा हुआ।

मुझे तो रह-रहकर पं. गंगाप्रसाद शास्त्री जी की मोहनी मूर्ति याद आती रहती। मुझे उनको सुनने, दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त रहा है।

धर्मसिंह को याद करिये- आर्यो! स्वामी श्रद्धानन्द शौर्य शताब्दी पर महान् श्रद्धानन्द के लाड़ले, आर्य, निर्भीक बलिदानी धर्मवीर सिंह को भी याद कर लेना। वह करनाल

जिले की देन था। वह केरल, कर्नाटक, सुदूर स्थानों पर ऊँच-नीच विरोधी, आन्दोलन में महाराज के साथ था। चाँदनी चौक में, जलियाँवाला में भी साथ था।

क्या-क्या अरमान है- मेरे मस्तिष्क में अभी देने को बहुत कुछ है। मन में अरमानों का तूफान है। श्रद्धानन्द शूर शताब्दी वर्ष पर बहुत कुछ देना है। अजय जी के लिये तीन नई पुस्तकों को पूरा करना है। ऋषि दयानन्द वाला बाइबिल राहुल जी ने मेरे लिये अजमेर भेज दिया। आपाधापी में किसी ने आज तक मुझे नहीं दिया, न पहुँचाया। वहाँ पुस्तकालय में पहले ही था। यह भी दे दिया। 'बाइबिल सत्यार्थप्रकाश के आलोक में' पूरा करो- यह प्रेरणा श्री सत्येन्द्र जी की, ओममुनि जी की, राहुल जी व प्रिय अनिल की है। परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस मनाने का निर्णय लिया गया है। सभा के जन्मकाल से मनुष्यों के अकाल से अनिष्ट करने वाले तत्त्व भर्ती कर लिये गये।

लाला गोविन्दराम जी द्वारा प्राप्त एक अनूठी पुस्तक के प्रकाशन की अजय जी ने तैयारी कर ली है। इसके प्रकाशन से सभा के यथार्थ इतिहास का प्रामाणिक स्वरूप सामने आ जायेगा। सभा के आर्यकरण का प्रयास छेड़ने वाले तो स्वामी श्रद्धानन्द जी ही थे, अन्यथा मूलराज, मथुरा का पोप पण्डिया तो सब एक से एक बढ़कर थे। बढ़-चढ़ कर बातें बनाने वाले महादेव गोविन्द रानडे और गोपाल हरि देशमुख ने वैदिक मिशन के लिये क्या किया? धौलपुर काण्ड हुआ तो कर्नल प्रतापसिंह ने मौन साध लिया। श्रीरामविलास ने यथार्थ ही लिखा था कि स्वामी श्रद्धानन्द के उपकार से राजस्थान में आर्यसमाज की रक्षा हुई।

नई सूर्यनगरी, वेद सदन, अबोहर, पंजाब

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ निःशुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रातः ९ से ११ बजे तक है। रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

पं. लेखराम के ग्रन्थ संग्रह

'कुल्लियाते आर्यमुसाफिर' का प्रथम भाग प्रकाशित

दूसरे भाग का प्रकाशन कार्य प्रगति पर

पं. लेखराम आर्यमुसाफिर का ग्रन्थ संग्रह ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' जो कि एक दुर्लभ ग्रन्थ बन चुका था, परोपकारिणी सभा ने उसे पुन: प्रकाशित करने का संकल्प लिया। जिसका सुखद परिणाम यह है कि इस अमूल्य निधि का प्रथम खण्ड महर्षि दयानन्द सरस्वती के १३५ वें बलिदान दिवस के अवसर पर छपकर तैयार हो चुका है। दूसरा भाग कुछ ही समय उपरान्त सुधी आर्यजनों को उपलब्ध होगा। इस ग्रन्थ के सम्पादन के गुरुतर कार्य में आर्यसमाज के ज्ञानवृद्ध विद्वान् व परोपकारिणी सभा के सम्मानित उपप्रधान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु ने जो महनीय परिश्रम किया है, उससे इस ग्रन्थ की महत्ता में और अधिक वृद्धि हुई है। सभा उनका हृदय से आभार व्यक्त करती है। साथ ही जिन महानुभावों ने इस कार्य में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया, उनका भी सभा धन्यवाद ज्ञापित करती है। सहयोगी जनों के नाम ग्रन्थ में प्रकाशित भी किये गये हैं।

अब जबकि दूसरा भाग छपने के लिये तैयार है, ऐसे में आर्यजन अपने सहयोग से इस ज्ञानयज्ञ को सम्पन्न करेंगे, ऐसी आशा है। **- मन्त्री**

परोपकारी के पाठकों से निवेदन

प्रिय पाठकगण, सादर नमस्ते!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आपकी प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं ताकि युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के लोकोपकारी एवं धार्मिक सन्देश जन-जन तक पहुँच सकें तथा उन कल्याणकारी विचारों को पढ़कर प्रत्येक पाठक सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं वैदिक विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे।

सज्जनो, हम इस पत्रिका की लाभ-हानि की बात नहीं कर रहे। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि पैसा भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रुका रहता है, पुनरपि उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अत: ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप महानुभाव वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता, रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल, अग्नि के बीच में उनका होम कर, शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

मनुष्यों को चाहिये कि पुरुषार्थ से विद्या का सम्पादन, विधिपूर्वक अन्न और जल का सेवन, शरीरों को नीरोग और मन को धर्म में निवेश करके सदा सुख की उन्नति करें। **-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.१४**

गुलामी - एक शाप

लाला लाजपत राय

आक्रमणकारी विजेता केवल भूमि या व्यक्तियों पर ही अधिकार नहीं करता, बल्कि हारे हुए लोगों का आत्मसम्मान, लड़ सकने का विश्वास, उसके आदर्श, उसकी जीवन शैली-सब कुछ धूल-धूसरित हो जाता है। केवल शासन ही नहीं बल्कि हर दृष्टिकोण से वह विजेता को अपने से अधिक योग्य मान लेता है। फलस्वरूप गुलामी, जो कि अभिशाप थी, वह उसे वरदान लगने लगती है; इतना गहरा असर होता है गुलामी का। उपरोक्त लेख इसी प्रक्रिया को विस्तार से समझाता है। यह लेख 'लाला लाजपतराय' द्वारा लिखित पुस्तक 'दुःखी भारत' (१९२८ ई. में प्रकाशित) के विषय प्रवेश का एक अंश है। यह वही पुस्तक है जो लाला जी ने मिस कैथरीन मेयो की 'मदर इण्डिया' के प्रत्युत्तर में लिखी थी। -सम्पादक

विदेशी शासन की पराधीनता राष्ट्र के पतन का एक महान कारण है - प्रो. ई. ए. रॉस

राष्ट्रीय दृष्टिकोण से कहा जाए तो एक जाति के ऊपर दूसरी जाति की गुलामी से बढ़कर और कोई श्राप नहीं हो सकता। लूटमार करने और देश जीतने के इरादे से जो राजा अपना दल लेकर निकल पड़ता है, उसका प्रभाव जिस देश को रौंदते हुए वह जाता है, उसके लिए नाशकारी होता है। पर यदि उसकी तुलना किसी देश की स्वाधीनता की क्षति से की जाए, जो उसकी जातियों को पूर्ण रूप से पराधीन करके, उस पर विदेशी शासन की संगीनों का भय दिखाकर शासन करने से क्रमश: होती है, तो वह कुछ भी न ठहरेगा। आक्रमणकारी तूफान की आता है, लूटमार करता है, उखाड़-पछाड़ करता है और बात की बात में सारे देश को तहस-नहस कर देता है। किंतु या तो अपने लूट के माल के साथ चला जाता है या उसी देश में बस जाता है और उसके प्राचीन निवासियों में मिल जाता है। पहले प्रकार के मनुष्य में सिकन्दर, महमूद गजनी, तैमूर, नादिरशाह और अहमदशाह अब्दाली जैसे आक्रमणकारी थे। दूसरे प्रकार के मनुष्यों में वे लोग थे और जो सिथियनों और हूणों को भारतवर्ष में ले आये, यहीं बस गए और भारतीय राष्ट्र के एक अंग बन गए या गौरी और बाबर जैसे शासक थे जिन्होंने यहाँ की भूमि पर अपने राजवंशों की गहरी नींव डाली।

यह सच है कि दोनों दशाओं में देश के लोगों को अत्यन्त लज्जा, अध:पतन और आर्थिक हानि का कष्ट सहना पड़ता है। पर अन्त में विजित और विजेता आपस में मिल जाते हैं। दोनों एक-दूसरे में अपना रक्त मिला देते हैं, दोनों एक दूसरे की सभ्यता और रहन-सहन के तरीकों को ग्रहण कर लेते हैं और दोनों अपनी सुदृढ़ विशेषताओं से एक नई सभ्यता और नई जाति की सृष्टि करने का प्रयत्न करते हैं। इन दोनों हालातों में विदेशी शासन का श्राप ऐसा तीक्ष्ण, पीड़ाजनक, विनाशक और अपमानजनक नहीं होता जैसा कि तब होता है जब एक जाति दूसरी पर अपना शासन लाद देती है और उसे अपने संपूर्ण राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक बल के द्वारा बनाए रखती है। एक अकेले बादशाह या शासक से दया, उदारता और न्याय भाव की प्रार्थना करने पर किसी अंश में सफलता हो भी सकती है, पर एक जाति या प्रजातंत्र से प्रार्थना करने पर कभी नहीं हो सकती। गैर जाति पर किसी प्रकार का शासन-विधान ऐसा कठोर और निर्दयता पूर्ण नहीं होता जैसा कि प्रजातंत्र का। प्रजातांत्रिक शासन घरेलू कामों के लिए अच्छा हो सकता है, परंतु दूसरी जातियों के हक में उसका परिणाम भयंकर होता है और अनन्त बुराइयों की आशंकाओं से भरा रहता है।

राजनीतिक गुलामी, सामाजिक बुराइयों और राष्ट्रीय अपराधों के दंडस्वरूप प्राप्त होती है। एक बार लद जाने से यह उन बुराइयों को बढ़ने और घनीभूत होने में और भी मदद देती है। यह राष्ट्र को फिर से जिंदा होने या उठने से बुरी तरह रोकती है। यह सामाजिक कुरीतियों और कमजोरियों को सबसे आगे ला धरती है। यह मानसिक,

नैतिक और शारीरिक सब प्रकार की भयानक गरीबी की ओर ले जाती है। यदि जाग्रति के कोई लक्षण प्रकट होते हैं, तो देर से उपस्थित होने पाते हैं या कानून, कूटनीति, मक्कारी और धोखेबाजी की पूरी शक्ति से रोके और कुचल दिए जाते हैं। पराधीन जातियों को हीन से हीन दशा में दिखलाना और लेखों तथा व्याख्यानों द्वारा उनको निर्लज्जता के साथ झूठ मूठ बदनाम करना, साम्राज्यवाद का एक अंग है। इसका उद्देश्य है पराधीन जातियों में दासता का भाव उत्पन्न करना और उसे दृढ़ रखना तथा उसके अधिकार, संपत्ति और स्वतंत्रता को अपने कब्जे में रखने के लिए शेष संसार की नैतिक-स्वीकृति प्राप्त करना। गोरी जातियों के प्रभुता की यही आदि बाइबल है। यही मनोभाव है जो साम्राज्यवादियों को उत्तेजित करता है। यही सामग्री है जिससे पराधीन जातियों को हाथ में रखने के लिए और स्वतंत्रता-प्राप्ति के लिए महत्वाकांक्षा और उद्योग करके, 'जो वे अपने आप अपनी हानि कर रहे हैं' उससे उन्हें बचाने के लिए 'लोहे के पिंजड़े' तैयार किए जाते हैं। इसी उपाय से ब्रिटेन ने भारतवर्ष में अपना राज्य स्थापित किया। इसी उपाय से अमेरिका के संयुक्त राज्य ने फिलीपाइन द्वीपों पर अधिकार कर लिया और अब हटने से इंकार करता है।

यह सच है कि कभी-कभी साम्राज्य स्थापित करने का काम आत्मविस्मृति की दशा में आत्मरक्षा या व्यापार की सामयिक आवश्यकताओं को लेकर आरंभ होता है किंतु शीघ्र, बहुत शीघ्र वह दुराग्रह और अधर्मपूर्वक साम्राज्य स्थापन का रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार जो साम्राज्य कायम होते हैं और बनाए जाते हैं उनको और बढ़ाया जाता है, उन पर अधिकार रखा जाता है और उनका प्रबन्ध किया जाता है। तो भी कभी-कभी जो साम्राज्य धूर्तता से स्थापित किए जाते हैं और बल से वश में रखे जाते हैं, उनके सामने एक विकट समस्या यह खड़ी हो जाती है कि उनके अधीन जातियों में राजनैतिक चेतनता जाग्रत हो उठती है। राजनैतिक पराधीनता आर्थिक लूट-खसोट की ओर ले जाती है। आर्थिक लूट-खसोट से नाना प्रकार के रोग और व्याधियों की उत्पत्ति होती है। यहाँ तक कि पृथ्वी पर की सबसे सीधी जातियाँ भी हिंसात्मक या अहिंसात्मक विद्रोह करने के लिए विवश हो उठती हैं और उनमें स्वतंत्रता की इच्छा उत्पन्न हो जाती है। शासक इसे बुरा मानते हैं। पहले वे स्वतंत्र होने के इस जोश को हँसी उड़ाकर, घृणा दिखाकर या बिल्कुल उपेक्षा करके समूल नष्ट करना चाहते हैं। उसके बाद हुकूमत का दर्जा आता है। दबाव की नीति बर्ती जाती है या मीठी बातों से उन्हें अपने वश में रखने का उद्योग किया जाता है। पर इन बातों में केवल मक्कारी, धोखेबाजी और जबानी जमा-खर्च रहता है। इसी तरह झगड़ा जारी रहता है। साम्राज्य-विस्तार के पंडित लोग दो दलों में विभक्त हो जाते हैं-

१. वे जो केवल अपनी शक्ति से शासन करना चाहते हैं और बेवकूफियों में नहीं पड़ना चाहते।

२. लिबरल लोग जो संरक्षता की दलील उपस्थित करते हैं। वे अपनी जातियों को और संसार को यह विश्वास दिलाते हैं कि उनके अधीन जो जातियाँ हैं, वो अपने आप शासन करने में असमर्थ हैं और स्वयं उन शासितों की भलाई के लिए यह आवश्यक है कि उन पर उनकी संरक्षता बराबर जारी रहे, उसका कभी अंत न हो। कुछ ऐसी शर्तें बना दी जाती हैं जिनके पूरी होने पर इस संरक्षता के समय की समाप्ति हो सकती है। इन शर्तों के पूरी होने में रुकावट डालने के लिए वास्तविक उपाय काम में लाये जाते हैं। इस प्रकार झूठे तर्कों का एक वृत्त रच दिया जाता है जिससे पराधीन जातियाँ और संसार दोनों को धोखा होता है। निरक्षरता, सामाजिक पवित्रता और गंभीरता का अभाव, अछूतों और दलितों की उपस्थिति, निजी और सार्वजनिक धर्माचरण का छोटा स्वरूप, हथियार बनाने, सेना संचालन करने और वैज्ञानिक रीति से रक्षा का संगठन न कर सकने की अयोग्यता आदि बातें स्वतंत्रता न देने के पक्ष में कही जाती हैं। उधर इन सब त्रुटियों को दृढ़ बनाए रहने के लिए प्रत्येक उद्योग भी किया जाता है। पराधीन जातियों के लिए यह घोषणा कर दी जाती है कि उनमें सदाचार की कमी है जिसके बिना कोई भी जाति स्व-शासन के योग्य नहीं हो सकती या एक जाति दूसरी के साथ अच्छी तरह पेश नहीं आ सकती। शासक लोग अपने या दूसरी जातियों के घरेलू इतिहास पर बिल्कुल ध्यान नहीं देते और उठते हुए राष्ट्र की इस नाम-मात्र की गिरी

दशा को तिल का ताड़ बना देते हैं और डंक की चोट पर कहते हैं कि ये जातियाँ दासता-प्रिय हो गई हैं, अपनी बेड़ियों को अलग नहीं करना चाहतीं, मूर्खता को ही अच्छा समझती हैं, गरीबी की पूजा करती हैं, गंदगी तथा रोग-व्याधियों में बड़ी भक्ति रखती हैं, स्वतंत्रता से डरती हैं और जो लोग खूब अच्छी तरह जमे हुए तथा लूट-खसोट का बाना पहने हुए एक-छत्र विदेशी शासन के विरोध का झंडा उठाते हैं-और स्वतंत्रता की पुकार मचाते हैं, उनसे घृणा करती हैं। राजनीतिक गुलामी और आर्थिक परवशता का कुछ ऐसा श्राप होता है कि स्वयं गुलाम जातियाँ भी यह नहीं समझतीं कि स्वराज के योग्य चरित्र गढ़ने तथा स्वतंत्र मनोवृत्ति पैदा करने का एकमात्र उपाय यही है कि इन बेड़ियों को तोड़ डाला जाए और इस शासन के जुएँ को उतार कर फेंक दिया जाए। साम्राज्यवादियों की इस सम्मोहन-विद्या और दास-जातियों के विरुद्ध इस प्रकार से सुसंगठित गन्दे प्रचार का ऐसा असर पड़ता है कि वे अपनी जकड़ी हुई दशा से बेचैन होने पर भी स्वतंत्रता से डरती हैं। इस प्रकार झूठे तर्क के वृत्त में यह युद्ध होता रहता है, अंत में बदला लेने की आग चारों तरफ भड़क उठती है और इतिहास में एक नया अध्याय आरंभ होता है।

प्रत्येक विद्यार्थी यह जानता है कि यूरोप शताब्दियों तक असभ्यता, मूर्खता और गुलामी का शिकार रहा है। यूरोप से हमारा मतलब संसार की सब गोरी जातियों से है। अर्थात् यूरोप और अमेरिका दोनों। अमेरिका तो अभी यूरोप का बच्चा ही है। इन गोरी जातियों ने एशिया से अपना धर्म पाया, मिस्र की कला और उद्योग का अनुकरण किया, भारतवर्ष और फिलिस्तीन से सदाचार सम्बन्धी आदर्श उधार लिये। संसार की आधुनिक उन्नत जातियों में इस समय जो कुछ भी वास्तविक खूबी और अच्छाई है वह अधिकांश में उन्हें पूर्व से मिली है। और कुछ लोगों के मत के अनुसार उनका रक्त भी एशिया के ही रक्त से बना है। जिन्होंने थोड़ा बहुत भी इतिहास पढ़ा है, वह जानते हैं कि अभी तीन ही सौ वर्ष पहले वर्तमान यूरोप के आधे भाग पर एशिया का अधिकार और शासन था। एशिया में ईसाइयों के आगमन से पहले केवल सिकंदर की ही सेनाएँ ऐसी थीं जिन्हें विजय प्राप्त हुई थी, पर उनका प्रभाव एशिया के एक बहुत छोटे भाग पर पड़ा था। और वह भी थोड़े ही समय के लिए। सिकंदर की चढ़ाई का बदला हूणों, चंगेज खाँ, तैमूर और उनके बाद मूर और तुर्कों के हमलों तथा जीतों से खूब अच्छी तरह से लिया गया। शताब्दियों तक रूस, तुर्की, सिसली, स्पेन और बालकान पर अधिकार करके एशियावालों ने राज्य किया। एशिया पर यूरोप का शासन तो अभी दो ही शताब्दियों से है। यह भारत की जीत के साथ आरंभ हुआ है और ईश्वर ने चाहा तो भारत के स्वाधीन होते ही उसका अंत भी हो जाएगा। पृथ्वी पर की सब गोरी जातियों ने भारत की राजनैतिक स्वाधीनता के विरुद्ध जो अपवित्र एका किया है उसके पीछे यही भय काम कर रहा है। भारत ही काले-गोरे आधे वर्णों की समस्या को जटिल बनाए हुए है। भारत की स्वतंत्रता से संसार की वो सब जातियाँ स्वतन्त्र हो जाएंगी जो सफेद नहीं हैं।

'महर्षि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ' का प्रकाशन

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर साहित्य प्रकाशन का निरन्तर विस्तार कर रही है। महर्षि द्वारा रचित साहित्य को प्राथमिकता से प्रकाशित किया जा रहा है। इसी क्रम में सभा **'महर्षि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ'** नामक पुस्तक नये कलेवर में, सुन्दर साज-सज्जा के साथ पुनः प्रकाशित करने जा रही है। इस शास्त्रार्थ संग्रह में महर्षि का एक दुर्लभ पत्र-व्यवहार-प्रश्नोत्तर 'कलकत्ता शास्त्रार्थ' नाम से जोड़ा गया है। यह ग्रन्थ शीघ्र ही छपकर आर्यजनों के हाथों में होगा। इस ग्रन्थ की लागत ५१,०००/-(इक्यावन हजार रुपये) आयेगी। जो सज्जन इस पुस्तक को सम्पूर्ण व्यय देकर अपनी ओर से प्रकाशित कराना चाहें, उनका परिचय चित्र सहित पुस्तक में दिया जायेगा। इस कार्य में मुक्त हस्त से सभा को सहयोग करें। - **मन्त्री**

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)-प्रथम खण्ड

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ४५०/- **पृष्ठ**- ४०८

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अवैदिक मान्यताओं के खण्डन एवं वैदिक विचारधारा की प्रतिष्ठा के लिये लेखन और उपदेश दोनों ही विधाओं का भरपूर उपयोग किया। उनके बलिदान के पश्चात् उनके जिन शिष्यों ने इस कार्य को गति दी, उनमें पण्डित लेखराम का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। पण्डित जी की उपस्थिति का आभास मात्र ही विरोधियों के अन्तस् को कँपाने के लिये पर्याप्त होता था। उस मनीषी के मौखिक उपदेश तो संग्रहित नहीं हो पाये, परन्तु उनकी धारदार लेखनी से निकले वाक्य हमारे पास आज भी विद्यमान हैं, जिन्हें ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' के नाम से जाना जाता है। परोपकारिणी सभा द्वारा इसका यह प्रथम खण्ड प्रकाशित किया गया है। दूसरा प्रकाशनाधीन है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जो कि कई भाषाओं के ज्ञाता हैं, उन्होंने इसका कुशल सम्पादन किया है।

२. अष्टाध्यायी भाष्य- भाग २

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रुपये **पृष्ठ**- ४१४

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक सिद्धान्तों, कर्मकाण्ड, वेदभाष्य आदि के साथ-साथ संस्कृत व्याकरण पर भी पर्याप्त साहित्य का निर्माण किया है। १४ खण्डों में प्रकाशित वेदांग-प्रकाश के साथ-साथ अष्टाध्यायी ग्रन्थ के चार अध्यायों तक का भाष्य भी किया। यह भाष्य तीन खण्डों में परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित किया गया, परन्तु इसका द्वितीय भाग समाप्त होने से यह अपूर्ण हो गया था। अब इसका दूसरा भाग भी छप चुका है, जिससे यह सम्पूर्ण रूप में व्याकरण के अध्येताओं को सुलभ हो गया है।

३. संस्कृत वाक्य प्रबोध

लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- ५०रुपये **पृष्ठ**- ११६

स्वामी दयानन्द सरस्वती संस्कृत को व्यावहारिक भाषा बनाना चाहते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने यह 'संस्कृत वाक्य प्रबोध' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में दैनिकचर्या में प्रायः प्रयोग होने वाले वाक्यों का संकलन है। ये वाक्य ५२ अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित हैं, यथा-गुरुशिष्य वार्तालाप प्रकरण, गृहाश्रम प्रकरण, नामनिवास-स्थान प्रकरण आदि। घर में बच्चों को संस्कृत सम्भाषण का ज्ञान कराने के लिये यह पुस्तक महर्षि द्वारा प्रदत्त उपहार है। छपाई एवं आवरण सौन्दर्य की दृष्टि से भी पुस्तक अत्यन्त आकर्षक है।

४. शङ्का-समाधान

लेखक- डॉ. वेदपाल (प्रधान, परोपकारिणी सभा)

मूल्य- ७०/- रुपये **पृष्ठ**- १४०

परोपकारी पत्रिका कई वर्षों से निरन्तर शङ्का-समाधान की परम्परा चलाये हुए है, जिसके कि आर्यजगत् में बहुत ही सार्थक परिणाम हुए हैं। धर्म, दर्शन, सिद्धान्त, व्याकरण आदि विषयों पर आये प्रश्नों के सभी समाधान परोपकारी के अलग-अलग अंकों में होने कारण पाठकों को एक साथ उपलब्ध नहीं हो पाते थे। इन सबकी उपयोगिता एवं पाठकों की माँग को देखते हुए इन सबको पुस्तक का रूप दिया गया है। समाधानकर्ता डॉ. वेदपाल आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् हैं, उनके शास्त्रींय ज्ञान से भरी यह पुस्तक सभा की ओर से स्वाध्यायशील आर्यों को सादर समर्पित है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं**। अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

ज. ने. वि. में राष्ट्रवाद की वीणा

स्वामी विवेकानंद सरस्वती

(१७ दिसम्बर २०१८ को ज. ने. वि. (जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय) में महाराजा छत्रसाल स्मृति समारोह समायोजित किया गया। इस कार्यक्रम में स्वामी विवेकानंद सरस्वती जी महाराज (कुलाधिपति- गुरुकुल प्रभात आश्रम) का अध्यक्षीय वक्तव्य हुआ। राष्ट्रप्रेमी सज्जनों के हितार्थ वह वक्तव्य यहाँ प्रस्तुत है....)

महाराजा छत्रसाल जी के सम्बन्ध में उनके जीवनवृत्त को लेकर के अनेक पक्षों का स्पर्श किया जा सकता है- समता है और फिर उदारता है, उसके विषय में सुना। किंतु मैं तो यह सोचता हूं कि इन सबका मूल्यांकन छत्रसाल जी के जीवन में हुआ कैसे? और भी लोग थे उनमें क्यों नहीं ढूंढा गया समता और जातिवादविहीनता। इसका एक ही कारण है, वो वीर थे।

'वीरभोग्या वसुन्धरा', 'अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्तु' (यजु॰- १७/४३)।

जो वीर होता है वही धीर होता है, और जब वो आगे चलता है तो लोग उसका अनुकरण करते हैं। मैं समतावादी बनूं, मैं ये बनूं, मैं वो बनूं, क्या मेरा मूल्य है? बकरी जंगल में शांतिपाठ करेगी तो इसका क्या परिणाम निकलेगा जी, भेड़िए को पता लग जाएगा कि मेरा भोज्य पदार्थ वहाँ है। बकरी जब शांतिपाठ करेगी तो भेड़िए को ढूंढना नहीं पड़ेगा, पता लगा कि मेरा भोज्य (खाद्य) पदार्थ वहाँ है तो वह आकर के शांतिपाठ करने वाली बकरी को चट कर जाएगा, भक्षण कर जाएगा। शांतिपाठ तो हुआ नहीं, न जंगल में शांति हुई।

अब उसी स्थान पर सिंह आकर के शांतिपाठ करता है तो सारे जंगल के जीव-जंतु क्या कहते हैं? वनराज शांति पाठ कर रहे हैं, चुपचाप बैठो। शांतिपाठ कौन कर रहा है? वनराज कर रहा है तो तुम्हें चुप बैठना चाहिए, नहीं तो तुम्हारी खैरियत नहीं, तुम बचोगे नहीं। तो छत्रसाल जी की सबसे बड़ी बात यही थी -**'बलमुपास्व'** (छान्दोग्य॰- ७/८/१)। बिना बल के तो कुछ होगा ही नहीं। विद्याबल हो, शारीरिक बल हो, बुद्धिबल हो, बल ही तो सब कुछ करता है। जो वीर है वही शांति की स्थापना कर सकता है, दुर्बल से शांति की स्थापना नहीं होगी। मैं यह दिखा रहा हूँ कि जो लोग केवल बातें बनाते हैं, जो दुर्बल व्यक्ति हैं, जिनका मानसिक स्तर इतना गिर चुका है कि जो दूसरे की हाँ में हाँ मिलाने के अतिरिक्त कुछ जानते ही नहीं। अनेक सुविधाएं उनको मिलती हैं, वो लिखते-पढ़ते रहते हैं, किंतु देखा जाए तो वो कितने दुर्बल हैं। दो पैसे के कारण से उन्होंने अपना चरित्र बेच दिया है। अरे वेश्या चाहे कितनी ही अट्टालिका में रही हो, कितनी ही धनवती हो, क्या वह एक सामान्य घर में रहने वाली जो सती है, उसका मुकाबला कर सकती है। वह सावित्री के सामने कुछ नहीं है, सीता के सामने वह कुछ नहीं है। सीता को जब भगवान् राम बार-बार कहने लगे कि वहाँ जंगल है, ये भय है, वो भय है, सारी समस्याएं हैं, तुम्हारी रक्षा कौन करेगा? तो सीता जी को क्रोध (मन्यु) आ गया। पहली बार है जब सीता जी को क्रोध (मन्यु) आया है, और वह कह रही हैं भगवान् राम से-

किं त्वाममन्यत वैदेहः पिता मे मिथिलाधिपः।
रामं जामातरं प्राप्य स्त्रियं पुरुषविग्रहम्।।

(वा. रा. अयो. ३०/३)

मेरे पिता वैदेह ने तुम्हारे साथ मेरा विवाह किया क्या वो ये जानते थे कि ये पुरुष रूप में स्त्री है, पुरुष नहीं है। अरे यह तो स्त्री है पुरुष है ही नहीं, जो बार-बार यह कहे कि तुम्हारी रक्षा कौन करेगा? रामायण पढ़िये, वाल्मीकि-रामायण। उसके बाद रामचन्द्र जी ने कुछ कहा ही नहीं, उन्होंने कहा चलो-चलो। इस राम की भुजाओं में बल है, पत्नी की रक्षा करने का। बस चल दिए। आगे मार्ग में कहीं हरण हुआ, लंकापुरी में रही, कभी रामचन्द्र जी ने नहीं कहा कि मैं तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता। तो पौरुष होना चाहिए।

अभी गाँधीजी की बात चल रही थी, भाई गाँधीजी की बात छोड़ दीजिए। ये गाँधीजी कृष्ण के उपासक बिल्कुल भी नहीं थे। वह तो गीता-पाठ दिखाने के लिए करते थे। उन्होंने अपनी प्रस्तावना में स्पष्ट लिखा है कि- गीता ऐतिहासिक ग्रन्थ नहीं है। गीता के कृष्ण मूर्तिमान्शुद्ध-संपूर्ण ज्ञान हैं, परन्तु

वे काल्पनिक हैं। यहां मेरा हेतु कृष्ण नाम के अवतारी पुरुष का निषेध करना नहीं है। मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूँ कि संपूर्ण कृष्ण काल्पनिक हैं। प्रस्तावना पढ़िए अनासक्तियोग की। मैं तो पढ़ता हूँ, और लोगों को दिखाता हूँ। जो गाँधीजी के भक्त थे, उन्हें मैंने कहा गाँधीजी तो यह कहते थे। मेरे कहने से नहीं, स्वयं पुष्टि कीजिए।

नेहरु जी शांति का आलाप करते थे। जब १९६२ में चीन ने आक्रमण किया तो आप देखिए बहुत सारे लोग तो ऐसे हो सकते हैं जो उत्पन्न भी नहीं हुए होंगे। मैंने आकाशवाणी पर नेहरु जी को रोते हुए सुना बिहार में। किन्तु वो कह रहे थे- आज मेरे मित्र (चीन) ने बड़ा विश्वासघात किया है, कोई नेहरु साधारण व्यक्ति थे? देश के प्रधानमन्त्री पहले से लेकर के १७ वर्ष तक वो रहे।

१५ वर्ष बाद संसद में जब उनके सामने प्रश्न किया गया तो वे नेहरु जी संसद में क्या कहते हैं? मैं वह सुनाना चाहता हूँ जो आपके वामपंथी चलाते हैं न मित्रता की बात। वे १५ वर्ष के बाद बोल रहे हैं- मुझे कई ऐसे मौके याद हैं जब वरिष्ठ सेनाध्यक्ष हमारे पास आए और रक्षा मंत्रालय को लिखकर भी बताया कि उन्हें कुछ हथियार चाहिए, अगर हमारे पास दूरदृष्टि होती, अगर हम सटीकता से जानते कि क्या होने वाला है, तो हम कोई दूसरी चीज करते... चीनी आक्रमण से भारत ने यह सीखा है कि आज के संसार में कमजोर राष्ट्रों की कोई जगह नहीं है। ये १५ वर्ष के बाद इन्होंने सीखा, जब सारा देश लुट गया। लोगों ने बताया तब नहीं सीखा, अब कह रहे हैं- हम अपने ही बनाए हुए एक काल्पनिक संसार में रह रहे हैं। यह नेहरु जी का वक्तव्य है संसद में। पूरा तो आप देख लीजिएगा, ये तो जितना मुझे मिला मैंने देखा। १५ वर्ष के बाद उनका यह वक्तव्य आता है। यदि वे पहले समझ जाते तो आज १ लाख ३५००० वर्गकिलोमीटर भूमि चीन के कब्जे में नहीं होती। चीन अरुणाचल पर भी हाथ मार रहा है कि अरुणाचल मेरा है।

छत्रसाल जी के इस जन्मदिवस या इनके संबन्ध में जो कार्यक्रम रखा गया है, इसमें मैंने हरिराम मिश्र जी से पूछा, और इसलिए पूछा कि भाई संस्कृत वाले हो, मैं संस्कृत में बोलूं या हिंदी में बोलूं? क्योंकि मैं अभी बैंगलोर में गया था, एक आश्रम में। साईं बाबा का कोई आश्रम था, मुझे बुलाया। तो मैंने देखा वहाँ तो अंग्रेजी का वातावरण है। मैंने यही कह दिया कि मैं तो संस्कृत में बोलूंगा, उन्होंने कहा-ठीक है, संस्कृत में बोलिएगा आप। वहाँ गया तो उन्होंने कहा कि यदि आप हिंदी में बोलें तो अच्छा है।

मैंने कहा उत्तर भारत बहुत है हिंदी में बोलने के लिए। मैं यहाँ आया हूँ तो मैं संस्कृत में ही बोलूँगा। बिना बोले चला जाऊँगा मैं बोलूँगा संस्कृत में ही, कन्नड़ मुझे आती नहीं। अंग्रेजी मैं बोलूँगा नहीं और हिंदी तो मैं बोल ही नहीं सकता, क्योंकि मैं तो संस्कृत में बोलने के लिए आया हूँ। कर्नाटक में संस्कृत समझने वाला कोई नहीं हो और इतने बड़े आश्रम में। तो वे २ दिन बहुत चक्कर काटते रहे, क्योंकि मैंने कह दिया था कि मैं लौट जाऊँगा पर मैं हिंदी में नहीं बोलूँगा यहाँ। मैं बोलूँगा तो संस्कृत में ही बोलूँगा, अब फिर उनको जैसे-तैसे कर कराके अनुवादक मिला। वह अनुवादक भी ऐसा ही था बेचारा, आकर बोला- मुझे संस्कृत आती तो नहीं, किंतु चंदामामा मैं थोड़ा पढ़ लेता हूँ। चंदामामा पढ़ने वाला मेरे संस्कृत का अनुवादक बनाया गया। यह आत्म गौरव-हीनता ही तो है।

भाई जब हम लोग विदेश में जाते हैं तो अंग्रेजी सीखते हैं। वे जब विदेश से आते हैं तो वे हिंदी और संस्कृत क्यों नहीं सीखते? हमारे आश्रमों में क्यों नहीं नियम हो कि तुम हिंदी बोलोगे या संस्कृत बोलोगे तब तुम्हें यहाँ आवास मिलेगा, और नहीं बोलोगे तो सीख करके आओ। यह आत्म गौरवहीनता का सबसे बड़ा प्रमाण है। हममें आत्महीनता की जो भावना आई हुई है, उसका जो मुख्य कारण है वह मैं बता देता हूँ। एक बार मिस स्टो नामक महिला थी। जब अमेरिका में दक्षिणी अफ्रीका के हब्शियों को भेड़-बकरी की तरह से मोल-भाव करके बेचा जाता था गुलाम के रूप में, तब उसने एक पुस्तक लिखी और पुस्तक का नाम था 'अंकल टॉम्स केबिन'। वो पुस्तक तो अंग्रेजी में है, किंतु उसका मुख्य अंश हिंदी में मैं बता देता हूँ, जिससे आपको दु:ख भी होगा और थोड़ा सा धैर्य भी होगा। वह क्या कह रही है-

''जो लोग पराधीन होते हैं उनमें दो बातें बहुत शीघ्र पनपती हैं- **पहली** तो यह कि उन लोगों को अपने पहले खान-पान, रहन-सहन, चाल-चलन और जीवन के सभी दूसरे मार्गों तथा संसाधनों से घृणा होने लगती है। कौन लोग?

जो पराधीन होते हैं। **दूसरी** यह कि अपने मालिकों के खान-पान, रहन-सहन, चाल-ढाल, बोल-चाल तथा जीवन के सभी साधनों में रुचि बढ़ने लगती है। ये आपके जो छात्र हैं न, जो ऊधम मचाते हैं, ये उन्हीं में से तो हैं। उनकी दासता जितनी पुरानी होती जाती है, ये दोनों बातें उतनी गहरी, स्थायी और सुदृढ़ होती जाती हैं। यदि इन दासों के लिए मालिकों की ओर से शिक्षा-दीक्षा का भी प्रबन्ध कर दिया जाए तो ये लोग इस शिक्षा के माध्यम से अपने आपको यहाँ तक बदल डालते हैं कि चमड़ी के बिना इनको पहचानना भी कठिन हो जाता है। रोमिला थापर क्या ब्रिटिश जैसी है? चमड़ी से ही तो पता लगता है कि वह भारतीय है, मैं तो नाम नहीं लेना चाहता था। रोमिला थापर के विषय में एक व्यक्ति ने कहा कि वे तो इतिहास की बड़ी जानकार हैं। यह स्वयं वो माँ (मिस स्यो) लिख रही है- चमड़ी के बिना इनका पहचानना भी कठिन हो जाता है। ये अपनी सत्ता को, अपने अतीत को, अपने पुराने गौरव को, यहाँ तक कि अपने बाप-दादों को भी भूलकर अपनी प्रत्येक बात में अपने को स्वामियों के जीवन में स्वयं को बदलने के लिए यत्नशील रहते हैं।

लेनिन हो, स्टालिन हो ये सब तो चलेगा। चाणक्य यहाँ हो, यह नहीं चलेगा। कौन कहता है? चमड़ी वाले दास कहते हैं। वे नहीं कहते, बल्कि जिनकी चमड़ी भारत की है वे सब कहते हैं। तो वे आगे लिखती हैं- किंतु ऐसा दिन कभी नहीं आयेगा कि वे अपने मालिकों के साथ एकम-एक कर सकें, क्योंकि वे तो इनको दास ही समझेंगे। चाहे रोमिला थापर हो, चाहे कोई अन्य हो।

एक पुस्तक निकली थी गोपाल मेनन राधाकृष्णन् के जो पुत्र हैं उनकी। आपके यहाँ से प्रकाशित हुई है। उसकी समालोचना राष्ट्रधर्म में प्रकाशित हुई थी। ऐसा आरोप लगाया है राधाकृष्णन् पर, एकदम स्तब्ध रह जाना पड़ता है। क्या कोई ऐसा कुपुत्र हो सकता है? गोपाल मेनन जो राधाकृष्णन् के पुत्र हैं, उन्होंने अपने पिताजी के ऊपर चरित्र का आरोप भी लगाया है। उस पुस्तक को आप पढ़िए, यह यहीं से तो प्रकाशित है। उन्होंने यहाँ कुछ दिन पढ़ाया भी है।

क्या ऐसा भी कोई पुत्र हो सकता है? हो सकता है, जो बिक जाता है। दासता से जो बिक जाता है। तो इन दासों को मुक्त होने की आवश्यकता है। आपका संस्कृत विभाग जागरूक है। अरे भाई नेहरु विश्वविद्यालय को संस्कृत का परिसर बनाओ। सब लोग संस्कृत बोलें, सब लोग समझें।

गाँधीजी भी तो काल्पनिक विचारों में ही डूबे रहते थे। और क्या, मैं तो कहता हूँ कि भाई इन लोगों का नाम मत लिया कीजिए। ये छत्रसाल का मंच है, यह शिवाजी का मंच है, महाराणा प्रताप का मंच है। ये क्या है कि यहाँ चाँटा लगाओ तो यह दूसरा गाल भी तुम्हारा है। ये दुर्बल लोगों का मंच बना देते हो तुम। सिंह की तरह से गरजिए। जब आप लोग गरजेंगे, तब विश्व में शांति स्थापित होगी। आपके बकरी की तरह मिमियाने से विश्व में शांति नहीं होगी। परमात्मा आप सबको शक्ति दे, संस्कृत वालों को विशेष करके शक्ति दे। '**अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्तु**' आप आगे बढ़ें।

'ममाग्ने वर्चो विहवे' ष्वस्तुवयन्त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम। मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्त्रः...' चारों दिशाएं मेरी ओर झुक जाएँ। जब इस प्रकार का आप पाठ करेंगे तो यूरोप और वाशिंगटन भी आपकी सुनेगा, बकरी की नहीं सुनेगा। सिंह बनिए, छत्रसाल बनिए, छत्रपति शिवाजी बनिए। मैं महाराष्ट्र में गया, वहाँ देखा मुंबई में, शिवाजी का जहाँ भी प्रकरण आया मैंने किसी के मुख से शिवाजी नहीं सुना। वे कहते हैं छत्रपति शिवाजी। छत्रपति शब्द शिवाजी के साथ लगाते हैं। अहिल्याबाई के यहाँ जाइए तो अहिल्याबाई कोई नहीं कहता, माता शब्द लगाते हैं। मैं वहाँ एक कार्यक्रम में गया था, किसी के मुख से यह मैंने नहीं सुना अहिल्याबाई, माता अहिल्याबाई ही सुना। इतना गौरव जिन्होंने ऐसी कठिन परिस्थितियों में स्थापित किया, वे नहीं होते तो हम अब जीवित रहते क्या? हमारे जीने के कारण ही वही हैं। यह नेहरु विश्वविद्यालय भी उन्हीं के कारण से तो है। आप छत्रसाल को पढ़ें, बलमुपास्व बल की उपासना करें। '**अग्निमीळे पुरोहितम्**' अग्नि की उपासना करें। परमात्मा आपको शक्ति दे।

मिथ्या बात के प्रचार से अनर्थ बढ़ता है

जो मिथ्या बात न रोकी जाए तो संसार में बहुत से अनर्थ प्रवृत्त हो जायँ।

(स. प्र. भू.)

संस्कारों की वैज्ञानिकता

डॉ. प्रियवंदा 'वेदभारती'

मनुष्य स्वयं में एक स्वतन्त्र इकाई है, पर यह ऐसी ईकाई है जिसे सहयोग की सदा ही आवश्यकता रहती है। इसी आवश्यकता के परिणामस्वरूप ही मनुष्य में सामाजिकता का विकास हुआ। यह सामाजिकता ही मनुष्यों की पोषक व उनके अस्तित्व की रक्षक है।

'**कर्म वैचित्र्यात् सृष्टि वैचित्र्यम्**' के सिद्धान्तानुसार संसार में मनुष्यों के गुण, कर्म और स्वभावों में विचित्रता देखी ही जाती है। इस भिन्नता के मूल में हमारा ज्ञान व ज्ञान का उपयोग करने का सामर्थ्य ही प्रमुख है। व्यक्तिगत गुणों की भिन्नता सामाजिक समरसता की सहायक व बाधक दोनों हो ही सकती है। ऐसे में दोनों के मध्य सन्तुलन स्थापित करने से ही व्यक्ति व समष्टि का कल्याण संभव है। ऋषियों और आप्त विद्वानों ने इस विचार पर अन्वेषण किया और संस्कारों की प्रक्रियाओं का निर्माण किया। संस्कारों का प्रयोजन जहाँ व्यक्ति को समाज के अनुकूल बना समाज का विकास करना था वहीं व्यक्तिगत सामर्थ्य को विकसित कर संसार को साधन रूप से प्रयोग करते हुए मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करना भी था। विभिन्न कालखण्डों, सामाजिक परिस्थितियों व विचारशैली के परिणामस्वरूप संस्कारों के क्रम व संख्याओं में यथावसर परिवर्तन होते रहे, परन्तु उनके मूल सैद्धान्तिक आधार 'व्यक्ति ओर समष्टि के सन्तुलन से नि:श्रेयस् प्राप्ति' की प्रधानता बनी ही रही।

आधुनिक युग विज्ञान का युग समझा जाता है। तकनीक व यन्त्रों की बहुलता वाले इस कालखण्ड में पाश्चात्य देश यथा यूरोप (हरिवर्ष) और अमेरिका (पातालदेश) अग्रणी समझे जाते हैं। इन देशों में प्रत्येक पदार्थ की विद्या को 'साइंस' कहते हैं। जब इस साइंस को वे कार्यरूप में परिणत करते है तो उसे 'आर्ट' कहते हैं। प्राच्य वैज्ञानिकों अथवा ऋषियों के दृष्टिकोण के साथ यदि इसकी तुलना करें तो प्रत्यक्ष तथ्यात्मक जानकारी ही आधुनिकों का विज्ञान व प्राच्यों का ज्ञान है तथा जानकरी पर आधारित्र क्रिया व यांत्रिकी आधुनिकों का आर्ट व प्राच्यों का कर्म है। ये दोनों क्षेत्र मुख्य करके जड़ पदार्थो व तत्सम्बन्धी ज्ञान पर आश्रित हैं। यहाँ तक दोनों समान हैं। आधुनिक यहाँ ठहर जाते हैं पर प्राच्य, ब्रह्म का विचार करते हुए उपासना व उससे ज्ञान की परिपक्वावस्था अर्थात् यथार्थ ज्ञान या तत्त्वज्ञान को प्राप्त करते हैं और इसी तत्त्वज्ञान को विज्ञान के नाम से मानते हैं। प्राच्यों में विद्या के ये ४ विभाग ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान काण्ड नाम से प्रसिद्ध हैं जो कि वेदों का प्रतिपाद्य विपय है। एक 'वेद' कहने से चारों काण्डों का बोध अथवा क्रमश: प्राप्त विज्ञान का ही बोध होता है। इस वैदिक विज्ञान को आत्मसात् किये हुए ऋषियों ने, आप्त विद्वानों ने सर्वकल्याण की भावना से कुछ प्रक्रियाओं को सूत्रित किया। वे सूत्रित ग्रन्थ ही कल्पसूत्र, गृह्य सूत्र के रूप में प्रसिद्ध हुए। इसी परम्परा में प्राचीन ऋषियों व सन्दर्भ ग्रन्थों का आश्रयण करते हुए महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने **संस्कार विधि** पुस्तक का निर्माण किया। जिसमें निपेक से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त १६ संस्कारों का सप्रमाण युक्तियुक्त विवेचन किया है।

स्वामी जी के शब्दों में-

प्र.- 'संस्कार किसे कहते हैं?'

उ.- किसी द्रव्य को उत्तम स्थिति में लाना, इसका नाम संस्कार है, इस प्रकार स्थित्यन्तर मानवीय प्राणियों पर होवे, एतदर्थ आर्य लोगों ने सोलह संस्कारों की योजना की है।

महाभारत के युद्ध के पश्चात् भारतवर्ष का ज्ञान-विज्ञान व विकास का क्रम नष्टप्राय: हो गया व अल्पज्ञ, अनाड़ियों (अनार्यों) का बोलबाला हो गया। परिमाणस्वरूप अन्वेषण, शोध, विचार-विमर्श का स्थान काल्पनिक व अनर्थक कर्मकाण्ड ने ले लिया। इससे वर्तमान में हमारे प्राचीन सिद्धान्तों व ऋपि-प्रणीत प्रक्रियाओं को जाँचने-परखने की भौतिक प्रयोगशालायें प्राप्त नहीं होतीं जिसका कि आधुनिक पाश्चात्य वैज्ञानिक अथवा उनका अन्धा अनुकरण करने वाले पौरस्त्य जनसामान्य दम्भ करते हैं व प्राच्यों का उपहास करते हैं, परन्तु इतना होने पर भी कुछ

परम्परागत शास्त्र व प्राचीन वैज्ञानिक प्रक्रियाएँ अभी तक अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं जिसमें आयुर्वेद मुख्य है। संभवत: आयुर्वेद के तात्कालिक व प्रत्यक्ष प्रभाव ही इसमें प्रमुख हेतु हैं। सुश्रुत संहिता चिकित्सा का मुख्य ग्रन्थ माना जाता हुआ भी अपने श्लोक-

''समदोष: समाग्निश्च समधातु मल क्रिय:।
प्रसन्नात्मेन्द्रिय मन: स्वस्थ इत्यभिधीयते।''

में न केवल शारीरिक अपितु मानसिक व आत्मिक स्तर पर मनुष्य मात्र को स्थिर व पुष्ट करने के सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। प्रत्यक्ष के अपलाप का सामर्थ्य प्राच्य व पाश्चात्य किसी में नहीं है। इसी से आधुनिक विद्वान् प्राय: संस्कारों को यथासंभव स्थूल स्तर पर आयुर्वेद सम्मत शारीरिक उन्नति के साथ ही जोड़कर देखते हैं। उदाहरण के लिये चूड़ाकर्म में बालों का काटना मस्तिष्क की उष्णता को कम करने के लिये अथवा कर्णवेध में कान में छिद्र करना आंत्र व वृषण रोगों के उपचार के रूप में प्रसिद्ध हैं। किन्तु समग्र १६ संस्कारों को एक समष्टि की दृष्टि से देखें तो सन्तान से समाज-निर्माण की सरल किन्तु प्रभावशाली प्रक्रिया प्रस्तुत हो जाती है। जिसे आधुनिक विज्ञान में Ellgenics के नाम से जाना जाता है। इन १६ संस्कारों में प्रथम ९ संस्कार जहाँ बालक व उसके समीपतम माता-पिता से मुख्यकर के सम्बन्धित हैं वहीं अन्तिम ७ संस्कारों के केन्द्र में प्रधान रूप से समाज है। मनु महाराज के अनुसार संस्कारों की अनिवार्यता प्रदर्शित करते हुए यहाँ दो का ही कथन प्रधान रूप से करते हैं।

निषेकादीनि कर्माणि य: करोति यथाविधि।
संभावयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते।।

मनु. २/१४२।।

१. प्रथम निषेक संस्कार- बृहदारण्यकोपनिषद् अ. ६, ब्रा. ३,४ में गर्भाधान का विस्तार से वर्णन मिलता है। छान्दोग्य-उपनिषद में गर्भधारण करने वाली स्त्रियों को क्या-क्या पदार्थ खाने चाहिएँ, जिससे पुत्र के शरीर और बुद्धि में दृढ़ता आती है, यह मुख्यकर विचार किया है। माता का शरीर भावी शिशु के शारीरिक व बौद्धिक निर्माण के लिए उतना ही महत्त्व रखता है जितना बीज के लिये क्षेत्र। व्यक्तित्व-निर्माण का यह प्रथम सोपान यद्यपि माता-पिता को स्थूल रूप से प्रभावित करता है तथापि शिशु को केन्द्र में रखकर ही इस संस्कार की योजना की गई है ताकि भावी व्यक्तित्व नैसार्गिक रूप से किसी भी प्रकार से असमर्थ न रह जाये। वास्तव में अति सूक्ष्म स्तर पर किया गया इस प्रकार का विचार व व्यवहार न केवल शारीरिक रचना अपितु शरीर क्रिया-विज्ञान व मनोविज्ञान सम्बन्धी गम्भीर व निश्चित अनुभव के बिना असंभव है।

आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से यदि विचार करें तो गर्भधारण होने के लिये ही सर्वप्रथम भावी माता-पिता का तनावमुक्त होना अत्यावश्यक माना जाता है। तनाव की स्थिति में माता-पिता में शारीरिक दोष न होते हुए भी गर्भधारण की सम्भावनाएँ कम होती जाती है। साथ ही गर्भाशय में अम्लीय वातावरण हो तो युग्मक (zygote/ fertilized egg) के वहाँ रुककर विकास को प्राप्त होने की संभावना नगण्य हो जाती है। गर्भधारण के तत्काल बाद स्त्री व पुरुष में होने वाले परिवर्तनों में मुख्य परिवर्तन रसायनों (Pologesterone, Estrogen, Hormones) के स्तर का बढ़ना है। ये रसायन मस्तिष्क द्वारा नियन्त्रित होते हैं। इस वृद्धि के परिणामस्वरूप शिर: शूल (Headaches), मतली (Morning Sickness) विवन्ध (Constipation) आदि लक्षण होते हैं। इन सबके अतिरिक्त मनोकायिक परिवर्तन (mood swings) सर्वाधिक प्रभावित करने वाला लक्षण है। Harvard Universitys Mind Body, Medicine Institute के शोध के अनुसार जो महिलाएँ आधुनिक ध्यान-पद्धतियों का सहारा लेती हैं उनमें गर्भ धारण की क्षमता ३ गुना बढ़ जाती है। ध्यातव्य है इन ध्यान-पद्धतियों में केवल श्वास की कुछ प्रक्रियाओं पर ध्यान दिया जाता है जो कि प्राचीन ध्यान पद्धति की सज्जा के क्षुद्र अंश के रूप में पहले से ही वर्णित हैं।

इस विवेचन से यह तो स्पष्ट ही है कि प्राच्य लोग बुद्धि में (समाधि में) इन सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त कर लेते थे व आधुनिक लोग प्रयोगशाला में ऐसा करते हैं। कदाचित् इसलिये भी प्राच्यों के शोधों के प्रमाण उस रूप में प्राप्त नहीं होते जैसे आधुनिक वैज्ञानिकों के। अस्तु...।

२. वानप्रस्थ संस्कार- पुत्र का बेटा होते ही गृहस्थाश्रम

में वास करने वाला गृहस्थी वानप्रस्थाश्रम धारण करे, ऐसी योजना थी। वानप्रस्थाश्रम में धर्माधर्म और सत्यासत्य के विषय में निर्णय होता रहता था, क्योंकि विचार के लिये समय मिले और गुण दोष का निर्णय करने में आवे, इसलिए वानप्रस्थाश्रम की योजना की है। वास्तव में धर्म क्या है-

ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।

ऋ.म. १/सू. ८९। मन्त्र ८।।

महर्षि जी मन्त्र के भावार्थ में लिखते हैं विद्वान्, आप्त और सज्जनों के संग के बिना कोई सत्य-विद्या का वचन सत्व-दर्शन और सत्य-व्यवहारमय अवस्था को नहीं पा सकता और न इनके बिना किसी का शरीर और आत्मा दृढ़ हो सकता है, इससे सब मनुष्यों को यह उक्त व्यवहार वर्त्तना योग्य है।

रोचक बात यह है कि यहाँ ज्ञान-प्राप्ति की विधि भी बताई है, उसका फल भी बताया है व उसका उपयोग भी बताया है। वास्तव में वानप्रस्थ वन में वास (स्थूल निवास) करने का नाम नहीं है अपितु यह विज्ञान अर्थात् ज्ञान की निश्चितता को स्वयं में स्थापित करने का पर्याय है। उपर्युक्त ऋचा के अनुसार ज्ञान को कर्म में परिणत करना वानप्रस्थी का कर्त्तव्य है। यह ज्ञान-विज्ञान समाज के विकास में महत्त्वपूर्ण भाग बनता है। पक्षपात का त्याग करने से सम्पूर्ण संसार में समानता की वृद्धि हो जाती है। जैसे वन के पदार्थों पर वनवासी का अधिकार सिद्ध है पर वनवासी उनका संग्रह नहीं करता, उसी प्रकार वानप्रस्थी के लिये यह संसार जब वन की तरह उपलब्ध हो जाता है और वह उसमें अपरिग्रह की बुद्धि रखता है तो ऐसी श्रेष्ठ स्थिति वानप्रस्थ और संन्यास का मिश्रित क्षेत्र कहलाती है। वानप्रस्थी के सभी कर्म संसार का सहयोग करने, व्यक्ति और समष्टि में सन्तुलन बनाने, ज्ञान-विज्ञान का विस्तार करने और आत्मिक व आध्यात्मिक ऊँचाइयों को छूने के प्रति समर्पित हो जाते हैं। वास्तव में देखा जाये तो सांसारिक पदार्थों के प्रति महत्त्वाकांक्षी गृहस्थी व परमसत्ता के प्रति महत्त्वाकांक्षी संन्यासी का सामञ्जस्य वानप्रस्थी में देखने को मिलता है। इस सम्पूर्ण विवेचन में व्यक्ति के मानसिक परिवर्तन व विकास का विज्ञान केन्द्रीभूत है। मन की दिशा और दशा स्थिर होने से शरीर अर्थात् मनुष्य रूपी ईकाई की गतिविधि व समष्टि के प्रति उसकी उपयोगिता भी स्पष्ट व सुसंस्कृत होती जाती है। संभवतः इसीलिये स्वामीजी महाराज का उपदेश है- जिस करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त हो सकते हैं और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं, इसलिए संस्कारों का करना सब मनुष्यों को उचित है- **दयानन्द सरस्वती**

और गीता में भी कहा है-

यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम्।।

१६/२३।।

आर्ष कन्या विद्यापीठ, नजीबाबाद, बिजनौर, उ.प्र.

परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस

(२७ फरवरी २०१९)

महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा परोपकारिणी सभा की स्थापना एक ऐतिहासिक घटना है। स्थापना के साथ-साथ स्वामी जी ने इस सभा को अपना उत्तराधिकारी बनाकर अपने समस्त निजी अधिकार, उद्देश्य एवं वस्तुओं का अधिकार भी सौंप दिया। एक ऋषि द्वारा किये गये इतने बड़े निर्णय की महत्ता को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा की कार्यकारिणी ने सभा का स्थापना दिवस मनाने का निश्चय किया है। यह कार्यक्रम दिनांक २७ फरवरी २०१९ को ऋषि उद्यान में ही मनाया जायेगा। आप सभी आर्यजन सादर आमन्त्रित हैं। - **मन्त्री**

इस बात का निश्चय है कि ब्रह्मचर्य्य, उत्तम शिक्षा, विद्या, शरीर और आत्मा का बल, आरोग्य, पुरुषार्थ, ऐश्वर्य, सज्जनों का संग, आलस्य का त्याग, यम-नियम और उत्तम सहाय्य के विना किसी मनुष्य से गृहाश्रम धारा जा नहीं सकता।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.३१

आधुनिक दिखने की बीमारी

प्रभाकर

ये संसार इतना विचित्र है कि इसे समझने के लिए मानव की सोच छोटी मालूम पड़ती है, मगर उससे भी विचित्र है मानव की वही सोच, जो किसी और क्या खुद मानव तक की समझ से परे है। इसके सोचने-विचरने की अद्भुत क्षमता इसे परमात्मा की सर्वोच्च कृति होने का सौभाग्य प्रदान करती है। शायद इसीलिए मानव संसार का सबसे उपयोगी और महत्त्वपूर्ण प्राणी बन जाता है और साथ ही सबसे खतरनाक भी। आदमी के मस्तिष्क की कार्यप्रणाली के कुछ नायाब उदहारण हमें प्राय: देखने को मिलते हैं। मुसीबत में फंसे किसी जीव को बचाने के लिए अपने जीवन को खतरे में डालने वाला थोड़ी ही देर बाद पके हुए मांस से भरी थाली लेकर खाने लगता है। अब कहाँ गई वो दया, वो करुणा, जो कुछ ही देर पहले किसी बेज़ुबान की दर्दभरी आवाज़ से फूट पड़ी थी ? सामंजस्य और समरसता पर श्रोताओं को स्तब्ध कर देने वाला भाषण देकर घर आये प्रोफ़ेसर साहब आते ही अपनी पत्नी को ज़ोरदार थप्पड़ चार सधी हुई गालियों के साथ रसीद कर देते हैं, केवल इस बात पर कि पत्नी ने घर की कुछ समस्याएँ गिना दीं थीं।

जो भी हो, पर आदमी के खयाल किसी भूल-भुलैय्या से कम नहीं, मजाल जो कोई पार पा जाए।

इस दुनिया का एक सामान्य सा नियम है – जो वस्तु जितनी तेज़ी से और जितनी अधिक मात्रा में लाभ पहुँचाने का सामर्थ्य रखती है, उसके द्वारा उतनी ही तेज़ी से उतनी ही अधिक मात्रा में विनाश की संभावना भी प्रबल रहती है। रेलगाड़ी का आविष्कार यातायात के लिए वरदान है, हज़ारों यात्रियों को कुछ ही समय में इधर से उधर कर देती है। लेकिन अगर पटरी से ज़रा सी भी खिसक जाए तो !!!!!! तो भी हज़ारों को एक साथ इधर से उधर कर देती है। मोटरकार की गति जितनी तेज़ होती है, दुर्घटना होने पर बचने की सम्भावना उतनी ही कम। इसका ये मतलब बिलकुल नहीं कि साधन बनाए ना जाएँ, पर ये ध्यान रहे कि बिना ब्रेक की और नौसिखिये के हाथ आई गाड़ी सड़क पर ज़्यादा देर नहीं चलती, नौसिखिये चालक समेत आस-पास के लोगों को भी अपना शिकार बना लेती है। भारतीय परम्परा के लिहाज से कहें तो शास्त्रों का अंकुश और स्वविवेक की क्षमता ना हो तो मनुष्य बुद्धि जैसे अपार क्षमता वाले साधन का दुरुपयोग कर विनाश ही करता है, उस पर भी जितना ज़्यादा पढ़ा-लिखा होगा, विनाश का दायरा भी उतना ही बढ़ता जायेगा। लेकिन फिर वही बात, मतलब ये नहीं कि विद्या पढ़ी ना जाये, पर ये ध्यान रहे कि बिना विवेक और बिना किसी अंकुश के ये विद्या, ये बुद्धि अनिष्ट ही करती है। इसके लिए महर्षि मनु ने एक श्लोक लिखा-

आर्षं धर्मोपदेशञ्च वेद-शस्त्राविरोधिना।
यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः।।

क्या करना चाहिए और क्या नहीं, क्या सही है और क्या गलत, इसका निर्णय तर्क की कसौटी पर करना चाहिए। लेकिन तर्क तो दुधारी तलवार है, यह जितनी कुशलता से अनुचित का खण्डन करती है, उतनी ही कुशलता से उचित को अनुचित भी सिद्ध कर देती है। ये तो घोड़ा है, जितना तेज़ सही दिशा में दौड़ता है, उतना ही तेज़ उल्टी दिशा में भी। गति रोकना उपाय नहीं है, बल्कि इसे सही दिशा में बनाए रखना ज़रूरी है और सही दिशा मिलती है लगाम से। मनु कहते हैं कि तर्क पर वेद-शास्त्रों की लगाम ज़रूरी है, उसके बिना यह धर्म (उचित-अनुचित) का ठीक-ठीक निर्णय नहीं कर सकता। ऐसे में व्यक्ति का कोई गंतव्य नहीं होता, वह आपने आप पर परीक्षण करता है, आज ये जीवन-शैली अच्छी लगती है, कल कोई और, परसों कोई तीसरी। फिर वो दूसरों की नकल करना शुरू करता है, बिना ये सोचे कि मेरी ज़रूरतें क्या हैं।

मनुष्य का सुख-दु:ख, उसकी अनुकूलता और प्रतिकूलता पर निर्भर करता है। समस्या दिखी, उसका अनुकूल समाधान मिल गया तो सुख; वरना दु:ख तो है ही। यह शारीरिक सुख-दु:ख का सहज और स्वाभाविक मापन है। मानसिक स्तर पर व्यक्ति साधनों की प्राप्ति में

उचित-अनुचित का निर्णय भी कर लेता है। इस प्रकार यह मानसिक सुख-दु:ख शारीरिक सुख-दु:ख को सम्पुष्ट करता है।

पर जैसा कि हम पहले कह आए हैं कि मानव की सोच-समझ उसकी खुद की सोच समझ से भी परे है। मनुष्यों में कुछ ऐसी प्रजातियाँ भी पाई जाती हैं, जिन्हें अपने शरीर की संरचना और स्वाभाविक इच्छाओं से कुछ खास लेना-देना नहीं होता-ये खुद को दूसरों के अनुसार ढालने में कमाल की योग्यता रखते हैं। ज़ाहिर है कि इस काम में उन्हें बहुत त्याग-तपस्या भी करनी पड़ती होगी। इस सब के बाद उन्हें या तो योगी की श्रेणी में रखना पड़ेगा, या मनुष्य की श्रेणी से ही निकलना पड़ेगा।

२०-३० साल पहले दाढ़ी-मूछों के बिना साफ चेहरा फैशन (कुछ लोगों के अनुसार आधुनिकता) माना जाता था। ऐसा कोई चेहरा दिख जाए तो पंचायती बूढ़ों के शक की सुई उधर ही गिर जाती थी। चौपाल पर चर्चा चलती कि अमुक का लड़का कुछ ज़्यादा ही बिगड़ने लगा है, मगर आज साफ चेहरा भोलेपन और बालों से भरे गाल फैशन का मानक माने जाते हैं। किसी ज़माने में सर के बाल व्यवस्थित कटाकर सौन्दर्य का अनुभव होता था, फिर बाल बढ़ाकर सुन्दर दिखना चाहा, मगर आज सिर पर बनी सड़कनुमा आकृतियाँ मॉडर्न होने का अहसास कराती हैं। ये कुछ उदहारण हैं उस आम इन्सान की ज़िंदगी के, जो लगातार अपने को बाकी दुनिया के साथ दिखाना चाहता है। लोग चल रहे हैं, मैं भी चल रहा हूँ। मैं क्या चाहता हूँ, नहीं पता। मुझे कहाँ जाना है, नहीं पता। मेरी सोच, मेरी अनुकूलताएं, मेरा ध्येय, मेरे रास्ते, सब कुछ उस भीड़ पर निर्भर हैं, जो खुद इन सबसे अनजान है और अपने से आगे वाली भीड़ का निरन्तर अनुसरण कर रही है, केवल इस आशा पर कि शायद उसे सही रास्ता पता हो। पर सबसे आगे वाली भीड़ ये सोचकर पूरे उत्साह से आगे बढ़ रही है कि अगर इतने लोग मेरे पीछे चल रहे हैं तो रास्ता सही ही होगा। इस चलती हुई भीड़ में गति तो है पर ध्येय का ध्यान नहीं, क्रिया तो है पर क्रिया के परिणाम का बोध नहीं।

एक आम आदमी को प्यास लगने पर पानी याद आता है, पर इस प्रजाति को "जब प्यास सताए तो लिम्का याद आए", आखिर प्यास और लिम्का का आपस में रिश्ता क्या है और ऐसा क्या गुनाह किया है पानी ने कि उसे प्यास बुझाने के काम से हटा दिया गया ? पर क्योंकि दूसरों जैसा दिखना है तो यही मानना भी पड़ेगा और कहना भी, यही प्रक्रिया है खुद को प्रगतिशील व आधुनिक दिखाने की। जन्मदिवस के अवसर पर खाने के केक में गड़ा हुआ रसायनों से भरा मोम, फिर लोगों के मुँह पर पुता केक, भरी गर्मी में कसे हुए कपड़े, चढ़ती दोपहरी में स्कूल से घर लौटते हुए बच्चे के गले में कसी हुई टाई, पार्टी में आये लोगों (महिलाओं समेत) के हाथों में थमा शराब का ग्लास, परस्पर की भाषा हिंदी होते हुए भी बीच-बीच में गिरते, लड़खड़ाते हुए निकलते अंग्रेजी के शब्द, अच्छा ना लगने के बावजूद खुशनुमा चेहरे व उत्साही अंदाज़ में खाया गया पिज़्ज़ा, ये सब एक ही भूख की ज़मीन से उपजे झाड़ हैं और उस भूख का नाम है-मुझे आधुनिक, औरों जैसा दिखना है। होली और दिवाली जिन्हें व्यर्थ की परम्पराएँ लगती हैं, वही घर पर क्रिसमस ट्री सजाकर वैज्ञानिक सोच वाले बन जाते हैं। दूध पीकर जिन्हें उल्टी आती है, उनका मुँह कुत्ते चाटें तो अलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है और पशुप्रेम का तमगा मिला-सो अलग। छद्म आधुनिक बनने की ये भूख कब हमारे जीवन का हिस्सा बनकर दीमक की तरह हमें खा गई, पता ही नहीं चला।

इस भूख, इस बीमारी का असर जब तक व्यक्ति तक सीमित था, तब तक शायद यह सहनीय थी, पर अब इसका प्रभाव क्षेत्र बहुत बड़ा और आत्मघाती हो गया है। यह प्रवृत्ति निजी दायरों से निकलकर परिवार, समाज के गलियारों से होती हुई राष्ट्रीय सीमाओं तक जा पहुँची है। कुछ वर्षों पहले तक राष्ट्रवादी होना गौरव का विषय माना जाता था, आज अपने ही देश के खिलाफ और आतंकियों के अधिकारों को लेकर मीडिया में चर्चा करने को खुली मानसिकता कहकर गौरव का अनुभव किया जाता है। इस प्रवृत्ति के दो पहलू हैं, एक वो, जो इस पगलाएपन को बौद्धिकता या आधुनिकता का जामा पहनाकर अपना उल्लू सीधा करते हैं, दूसरे वो, जिनका ना कोई विचार है, ना ही

स्वार्थ, बस उन्हें उस भीड़ में खड़े होना है। छात्र विश्वविद्यालय में इकठ्ठा होकर देश को पूरे उत्साह से गाली देते हैं, फिर ताज़े-ताज़े तवे से उतरे राजनेता उनके उत्साहवर्धन के लिए पहुँच जाते हैं। फिर चर्चा इस बात पर होती है कि क्या अभिव्यक्ति की आज़ादी पर रोक लगनी चाहिए? जिन्होंने अपना दिमाग सस्ते दामों पर बेच दिया था, उन्हें मौका मिलता है अपनी प्रगतिशीलता को अपग्रेड करने का। वे इस विचार को हाथोंहाथ ले लेते हैं।

अपराध और अपराधी में दिव्य गुणों को खोजना आजकल फैशन सा बन गया है। आतंकवादी में समाज का सताया इंसान, पत्थरबाजों में नासमझी और भोलापन, चोर में आर्थिक तंगी, सड़क जाम करके नमाज़ पढ़ने वालों में धार्मिक अधिकार ढूंढने वाले ये क्यों भूल जाते हैं कि इनसे प्रभावित-व्यक्ति भी इंसान ही है, उसके भी तो कुछ अधिकार हैं। कोई सड़क चलता पागल आदमी भूखा हो तो नि:संदेह उसकी सहायता की जा सकती है, उसे भोजन दिया जा सकता है, लेकिन अगर वो मुझे ही मारकर खाना चाहता हो तो ऐसे आधुनिक विचार मुझे नहीं चाहियें। देशभक्ति के नाम पर आँख बन्द करके कुछ भी करना जितना गलत है, उतना ही गलत है आँख बन्द करके देशभक्ति का विरोध करना। अगर सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक व्यवस्थाओं में कहीं दोष हैं तो उन्हें हटाना भी चाहिए और बताना भी, पर केवल इसलिए कि ऐसा बोलने से मैं बौद्धिक लोगों की टोली में भर्ती हो जाऊँगा, ये निहायती घटिया सौदा है।

हर विचार का कोई ना कोई आधार होता है, कोई ना कोई उद्देश्य होता है। हमारी राष्ट्रीय चर्चाओं का भी उद्देश्य होना चाहिये- राष्ट्र की उन्नति, उसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को अपने दोषों को छोड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए, देश का विरोध और अराजक तत्त्वों का समर्थन इसमें कहीं नहीं आता।

ऋषि उद्यान, अजमेर।

अपील

'सत्यार्थप्रकाश' जैसी क्रान्तिकारी पुस्तक के प्रति किस आर्य की श्रद्धा नहीं होगी और कौन वैदिकधर्मी यह नहीं चाहेगा कि यह पुस्तक हर मनुष्य के हाथ में होनी चाहिये? आर्यों की इस तीव्र अभिलाषा को परोपकारिणी सभा गत ५ वर्षों से साकार रूप देने में प्रयासरत है। साथ में यह भी चाहती है कि यह अमूल्य पुस्तक आकार-प्रकार में भी आकर्षक ही हो। इन सबको ध्यान में रखकर सभा ने विश्व पुस्तक मेले में इसे ऐसे व्यक्तियों में वितरित करने का निश्चय किया जिन तक यह अभी नहीं पहुँच पाई थी। इस कार्य में परोपकारिणी सभा तो एक माध्यम मात्र है, मुख्य वितरक आर्यजन ही हैं। विश्व पुस्तक मेला- २०१९ का कुछ ही समय शेष है। अत: आर्यों से अपील है कि अधिक से अधिक लोगों तक सत्यार्थ पहुँचे, इसके लिये मुक्त हस्त से सहयोग करें। सत्यार्थप्रकाश के साथ-साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र भी नि:शुल्क वितरित किया जायेगा। आप जितनी प्रतियाँ अपनी ओर से बंटवाना चाहें, उतनीं पुस्तकों पर आपका नाम छापा जायेगा।

एक प्रति की लागत- १००रु.

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

शङ्का समाधान – ४१

डॉ. वेदपाल

शङ्का- आर्यसमाज जात-पाँत को नहीं मानता, लेकिन **सत्यार्थप्रकाश** में लिखा है कि ब्राह्मण-ब्राह्मण में, क्षत्रिय-क्षत्रिय में, वैश्य-वैश्य में, शूद्र का शूद्र में विवाह करें। चाहे जात-बिरादरी कहें या वर्ण, बात तो एक ही हुई। एक जगह स्वामी जी लिखते हैं-गुण, कर्म, स्वभाव के मिलने पर ही लड़के-लड़की का विवाह करना चाहिए, यदि नहीं मिलते तो, चाहे आजीवन कँवारा रहना पड़े, विवाह नहीं करना चाहिए। यह विरोधाभास क्यों?

तेजवीर सिंह, उत्तमनगर, नई दिल्ली

समाधान- आपकी शङ्का जाति एवं वर्ण को एक मानने के कारण है। **वर्ण शब्द वृञ् वरणे धातु से निष्पन्न है। इसका अभिप्राय है- जिसे चुना जाए। अर्थात् वर्ण आरोपित न होकर चयनित है। 'वर्णः वृणोते इति ततः'- निरुक्त**। इसमें दूसरा किसी पर किसी वर्ण को थोप नहीं सकता। स्वयं व्यक्ति को चुनना है कि वह किस योग्य है? तदनुरूप ही वर्ण निर्धारित होगा। व्यक्ति की योग्यता, सामर्थ्य एवं रुचि ही वर्ण-निर्धारण के महत्त्वपूर्ण आधार हैं, जबकि जाति-व्यवस्था जन्म से ही निर्धारित है- **'समानप्रसवात्मिका जातिः'- यो. द.** जिनका जन्म/प्रसव एक सदृश हो, वह जाति है। जैसे -मनुष्य, पशु आदि। संसार के सभी मनुष्यों का प्रसव/जन्म एक सदृश है, इसमें कुछ भी भेद नहीं। अतः संसार भर के सभी मनुष्यों की एक जाति है। इसी प्रकार पशु-पक्षी आदि। जबकि वर्ण की स्थानापन्न जाति मनुष्य को समान प्रसवात्मक होते हुए भी अनेक जातियों में बाँटती है।

सम्प्रति जाति-प्रथा का अभिप्राय समाज में प्रचलित जन्मना व्यवस्था से है, जिसमें ब्राह्मण के घर जन्म लेने मात्र से ब्राह्मण। इसी प्रकार क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के घर जन्म लेने मात्र से ही व्यक्ति क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र हो जाता है, भले ही उसमें कितने ही विरोधी गुण क्यों न हों।

वर्ण-व्यवस्था में ब्राह्मण आदि जन्म से न होकर गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर हैं। अर्थात् ब्राह्मण कुल में जन्म लेने वाला भी यदि ब्राह्मणोचित गुण, कर्म, स्वभाव से रहित है, तो वह ब्राह्मण न होकर अपने से निम्नवर्ती वर्ण क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र जिस किसी भी वर्ण के गुण, कर्म, स्वभाव से युक्त होगा, वह उसी वर्ण में परिगणित होना चाहिए। ब्राह्मण कुल में जन्म लेकर विद्याशून्य होने पर वह ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी नहीं है। धर्मसूत्र का कथन है-

''अधर्मचर्यया पूर्वो वर्णो जघन्यं जघन्यं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।''

जबकि जाति-व्यवस्था में इसके विपरीत गुणों की उपेक्षा कर केवल ब्राह्मण आदि के घर जन्म लेने मात्र से ही वह ब्राह्मण आदि कहलाने लगता है। इस जाति-व्यवस्था में जिस प्रकार निकृष्ट कर्म करने पर भी व्यक्ति निम्न जाति में परिगणित नहीं किया जाता, उसी प्रकार श्रेष्ठ कर्म करने पर उच्च जाति में स्वीकार नहीं किया जाता है। जबकि वर्ण-व्यवस्था में अपने से उत्कृष्ट वर्ण में सम्मिलित होने का अधिकारी हो सकता है। धर्मसूत्र का कथन द्रष्टव्य है-

''धर्मचर्यया जघन्यो वर्णः पूर्वं पूर्वं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।''

महर्षि ने वर्ण निर्धारण व्यवस्था का उल्लेख करते हुए-

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।
क्षत्रियाज्जातमेवन्तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।।

मनु. १०.६५

मनु को उद्धृत किया है। महर्षि के शब्द निम्नवत् हैं-

क- ''यह गुण कर्मों से वर्णों की व्यवस्था कन्याओं की सोलहवें वर्ष और पुरुषों की पच्चीसवें वर्ष की परीक्षा में नियत करनी चाहिए और इसी क्रम से अर्थात् ब्राह्मण वर्ण का ब्राह्मणी, क्षत्रिय वर्ण का क्षत्रिया, वैश्य वर्ण का वैश्या और शूद्र वर्ण का शूद्रा के साथ विवाह होना चाहिए, तभी अपने-अपने वर्णों के कर्म और परस्पर प्रीति भी यथायोग्य रहेगी।'' द्र. स.प्र. समु. ४, पृष्ठ ६३।

ख- ''जिस-जिस पुरुष में जिस-जिस वर्ण के गुण-कर्म हों उस-उस वर्ण का अधिकार देना, ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य उन्नतिशील होते हैं। क्योंकि उत्तम वर्णों को भय होगा कि जो हमारे सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त होंगे तो शूद्र हो जाएंगे और सन्तान भी डरते रहेंगे कि जो हम उक्त चाल-चलन और विद्यायुक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा।'' द्र. स.प्र. समु. ४ पृष्ठ ६५।

धर्मसूत्र, मनुस्मृति तथा महर्षि की वर्ण निर्धारण प्रक्रिया आप ध्यान से देखेंगे, तब स्पष्ट होगा कि **वर्ण व जाति एक नहीं हैं। वर्ण-व्यवस्था में व्यक्ति यावज्जीवन उत्तरोत्तर वर्ण की ओर बढ़ने का अवसर रखता है, जबकि जाति-व्यवस्था में प्रयत्न करने पर भी वहीं रहना है।** आज भी विवाह आदि सम्बन्ध के समय गुण, कर्म की प्रधानता/साम्य पर दृष्टि रहती ही है। महर्षि के कथन में न विरोध है और न ही विरोधाभास। -सम्पर्क-९८३७३७७९३८

ऋषि उद्यान में योगदर्शन एवं प्रारम्भिक संस्कृत शिक्षण की कक्षाएँ प्रारम्भ

महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान के आचार्य विद्यादेव जी के द्वारा ऋषि उद्यान में **दिनांक १ जनवरी २०१९** से **योगदर्शन एवं प्रारम्भिक संस्कृत शिक्षण की कक्षाएँ प्रारम्भ** की जा रही हैं। अध्ययन के इच्छुक जनों के निवास एवं भोजन की व्यवस्था परोपकारिणी की ओर से निःशुल्क रहेगी। स्थानीय व्यक्ति प्रतिदिन आना-जाना करें।

अध्यापन सम्बन्धी सम्पूर्ण व्यवस्था आचार्य विद्यादेव जी के अधीन रहेगी एवं आवास आदि की व्यवस्था ऋषि उद्यान कार्यालय द्वारा की जायेगी। आवासीय अभ्यर्थियों के लिये आश्रम सम्बन्धी समस्त नियमों का पालन अनिवार्य होगा।

आचार्य विद्यादेव
सम्पर्क- (१) ९८७९५८७७५६
(२) ८२३८७२२६७२

कार्यालय ऋषि उद्यान
०१४५-२६२१२७०
कार्यालय परोपकारिणी सभा
०१४५-२४६०१६४

सत्य का स्वरूप और सत्यार्थ का ग्रहण करना

जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहलाता है। विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझकर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।

(स.प्र. भूमिका)

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ दिसम्बर २०१८ तक)

१. श्री गौरव मिश्रा, अजमेर २. श्री शंकर मुनि, तेलंगाना ३. श्री जगदीश देवड़ा, जोधपुर ४. श्री बलबीर सिंह, अजमेर ५. श्री विष्णु सिंह दाँता, अजमेर ६. श्री अलंकार कौशल, अजमेर ७. श्री मुकेश हल्दानिया, अजमेर ८. श्री रणदीप आर्य, पानीपत ९. श्री रमेश मुनि, अजमेर १०. श्रीमान् दाहिमा, ऋषि उद्यान, अजमेर ११. श्री अग्निवेश आर्य व श्रीमती कंचन आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर १२. श्री यज्ञदत्त शर्मा, अजमेर १३. श्री सत्येन्द्र बालोत, जोधपुर १४. श्री राधेश्याम, सहारनपुर १५. श्री देशराज सत्यश्रु, भरतपुर १६. श्री सुरेन्द्र सिंह, ऋषि उद्यान, अजमेर १७. आर्यसमाज घाटकोपर, मुंबई १८. श्री सुरेश प्रसाद आर्य, पश्चिमी चम्पारन १९. श्री अशोक व श्री वीरेन्द्र, हैदराबाद २०. श्री भगवत प्रसाद तिवारी, अजमेर २१. श्रीमती सरला मेहता, अजमेर २२. श्री पारसनाथं, अजमेर २३. श्री टुकुन शिवनन्दन इन्द्राणी व जैन रामदीन, हॉलैण्ड २४. स्वामी दयामुनि विद्यापीठ गुरुकुल, कलानौर २५. श्रीमती कमला देवी, अजमेर २६. श्री विनोद कुमार राणा, करनाल २७. श्री कमल वत्स, सोनीपत २८. श्री राम कुमार, कैथल २९. श्री पुरुषोत्तम भारद्वाज, करनाल ३०. श्री लक्ष्मण मुनि, लखनऊ ३१. श्री जागेराम, भिवानी ३२. मै. तोषनीवाल चैरिटेबिल ट्रस्ट, अजमेर ३३. श्री धर्मेन्द्र आर्य, नई दिल्ली ३४. श्री गौरव यादव, नई दिल्ली ३५. श्री देवेन्द्र सिंह यादव, रेवाड़ी ३६. श्रीमती सुखदा शास्त्री, रोहतक ३७. श्री चन्द्रपति, रोहतक ३८. श्री घनश्याम पुरोहित, पीपाड़ सिटी, जोधपुर ३९. श्री कपिल सोनी, सोजत सिटी ४०. सुश्री उन्नति वर्मा, सोजतसिटी ४१. श्री भरत मालगोंडा, कोल्हापुर ४२. श्री शिव कुमार पाटिल, कोल्हापुर ४३. श्री ओम मिश्रा, लखनऊ ४४. श्री सत्यदेव आर्य, अजमेर ४५. सखी मण्डल, अजमेर ४६. आर्यसमाज बिंझोल, पानीपत ४७. श्री ओमप्रकाश शर्मा, भिवानी ४८. श्री दिवाकर अग्रवाल, दिल्ली ४९. श्री ओमप्रकाश शर्मा, बाढ़, मथुरा ५०. श्री उदय सिंह पठानिया, अजमेर ५१. श्री राजाराम शर्मा, कोरबा ५३. श्री शान्तिस्वरूप गोयल, लुधियाना ५४. श्री एस.के. सिंह, महाराजगंज।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में निःशुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ दिसम्बर २०१८ तक)

१. श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर २. श्री अग्निवेश आर्य व श्रीमती कंचन आर्य, ऋषि उद्यान, अजमेर ३. श्री लक्ष्मण मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ४. कु. पुण्याक्षी, अजमेर ५. श्री विजय सिंह गहलोत व श्रीमती कंचन गहलोत, ऋषि उद्यान, अजमेर ६. श्री दयाराम यादव, ग्वालियर ७. श्री भगवत प्रसाद तिवारी, अजमेर ८. श्रीमती सरला मेहता, अजमेर ९. श्री जितेन्द्र कुमार यादव, रेवाड़ी १०. नीरु, अजमेर ११. श्रीमती कमला देवी, अजमेर १२. श्री रमेश मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर १३. श्री विजेन्द्र गुलिया, रोहतक १४. श्रीमती शकुन्तला, रोहतक १५. श्रीमती सीता देवी, अजमेर १६. श्री अशोक बाबू राव, लातूर १७. सखी मण्डल, अजमेर १८. श्री वर्चस्व चौधरी, जयपुर १९. डॉ. सन्जना शर्मा, अजमेर २०. सुश्री निकिता तनेजा, अजमेर।

- परोपकारिणी सभा, अजमेर।

ऋषि मेला २०१८ के दानदाता

१३६. श्री दुलीचन्द गर्ग, भोपाल १३७. श्री वीरेन्द्रपाल अहलावत, रोहतक १३८. मा. चन्द्रसिंह दहिया, रोहतक १३९. श्री राजेन्द्र शास्त्री, रोहतक १४०. प्रो. योगेन्द्रनाथ गुप्ता, जम्मू १४१. श्री वेदप्रकाश आर्य, हिसार १४२. श्री ताराचन्द्र पाटीदार, प्रतापगढ़ १४३. श्री हरिप्रसाद, अजमेर १४४. श्री तुहीराम आर्य, भिवानी १४५. श्रीमती कुसुम भण्डारी, जालन्धर १४६. श्रीमती शकुन्तला आर्य, बीकानेर १४७. श्रीमती पुष्पलता सहगल, नसीराबाद, अजमेर १४८. श्री रामजीलाल धमीजा, मोहाली १४९. आर्यसमाज डोरिया, भीलवाड़ा १५०. श्री अमित, भीलवाड़ा १५१. श्री टेकराम, सोनीपत १५२. कमाण्डेण्ट प्रतापसिंह राजन, रोहतक १५३. श्री जवाहरलाल आर्य, बरेली १५४. श्री सुरेशचन्द शर्मा, अजमेर १५५. श्री भीकाराम भाटी, जोधपुर १५६. श्री गणपतलाल तापड़िया, कोटा १५७. श्री गोपाल दास, जयपुर १५८. श्री सुदेश राय, जयपुर १५९. श्री राजूराम, श्रीगंगानगर १६०. आर्यसमाज मन्दिर, नसीराबाद, अजमेर १६१. श्री नन्दकिशोर आर्य, नसीराबाद, अजमेर १६२. ब्र. राजेन्द्र, फरीदाबाद १६३. श्रीमती चन्द्रप्रभा, खन्ना, जम्मू १६४. श्री अर्जुनदेव कालड़ा, जयपुर १६५. श्री राजाराम शर्मा, कोरबा १६६. आर्यसमाज नैनीताल १६७. श्री राधाकिशन भूतड़ा, ब्यावर, अजमेर १६८. श्रीमती कमला देवी भूतड़ा, ब्यावर, अजमेर १६९. श्री महेश मालू, ब्यावर, अजमेर १७०. श्री वीरप्रकाश तापड़िया, अजमेर १७१. श्री श्रीचन्द चौहान, मेरठ १७२. श्री प्रमोद लाहोरी, अजमेर १७३. श्री जुगराज बालोत, जोधपुर १७४. श्रीमती आजाद कौर, रोहतक १७५. श्री दिनेश कुमार गुप्ता, जयपुर १७६. श्री अमित खींची, अजमेर १७७. श्रीमती रामरती देवी, रोहतक १७८. श्री कुंवरपाल सिंह, दिल्ली १७९. श्री श्रीनिवास आर्य, रोहतक १८०. श्रीमती मूर्त्ति देवी व श्री चन्द्रस्वरूप, रोहतक १८१. श्रीमती चन्द्रावती, रोहतक १८२. श्री प्रेमचन्द आर्य, पंचकुला १८३. श्रीमती मीना आर्य, दिल्ली १८४. श्री फतेहसिंह, पाली १८५. श्री चाँदकरण पालीवाल, अजमेर १८६. श्री रामसुख, जेठाना, अजमेर १८७. आर्यसमाज मन्दिर फुलियाँकलाँ, भीलवाड़ा १८८. श्री पुरुषोतम दास, जयपुर १८९. श्रीमती संयोगिता आर्य, रेवाड़ी १९०. आर्यसमाज कुचेरा, नागौर १९१. श्री चेतनप्रकाश आर्य, जोधपुर १९२. श्री रमेशचन्द पुरोहित, प्रतापगढ़ १९३. श्री रामचरण चन्देल, सिरौंज, विदिशा १९४. श्री सत्येन्द्र कुमार तलवार, जालन्धर १९५. श्री नरपतसिंह आर्य, भीनमाल, जालौर १९६. श्री प्रताप सिंह आर्य, अजमेर १९७. श्री एच.एल. तुली, अजमेर १९८. श्रीमती प्रतिभा राय, अजमेर १९९. श्री धनजी भाई चुन्नीलाल हालानी, गुजरात २००. श्री टीकम दास, देवास २०१. श्री ताराचन्द, रेवाड़ी २०२. श्री प्रेमचन्द, सहारनपुर २०३. श्री कृष्णपाल, दिल्ली २०४. मै. सोना टैक्सटाइल्स, बड़ेसरा, शाहपुरा, भीलवाड़ा २०५. श्री रमेश पुरोहित, प्रतापगढ़ २०६. श्रीमती शशि पुरोहित, प्रतापगढ़ २०७. श्री मनोहर दास, डेगाना, नागौर २०८. आर्यसमाज पीपाड़, जोधपुर २०९. श्री चम्पालाल आर्य, पीपाड़ २१०. श्री शम्भुदयाल, जेठाना, अजमेर २११. श्रीमती संतरा, रोहतक २१२. श्री अनुराग मलिक, रोहतक २१३. आर्यसमाज, बाराँ २१४. आर्यसमाज शाहपुरा, भीलवाड़ा २१५. श्री ओमप्रकाश झालानी, जयपुर २१६. श्रीमती कमला बाई गंगाधर भोंसले, लातूर २१७. आर्य स्पोर्ट्स एण्ड सोशल क्लब, अजमेर २१८. श्री ओमप्रकाश मलिक, दिल्ली २१९. श्री अनिल कुमार आर्य, दिल्ली २२०. श्री देवेन्द्र पटेल, जबलपुर २२१. श्री हिम्मत सिंह, आगरा २२२. श्री हरितेश रावीश, कैथल २२३. श्री प्रवीण कुमार दुबे, कानपुर २२४. श्रीमती सतमुरी, भरतपुर २२५. श्री तिलोक राम, नागौर २२६. श्री सूरज राणा आर्य, करनाल २२७. श्रीमती उषा शर्मा, नई दिल्ली २२८. श्री अमरनाथ आर्य, अम्बाला सिटी २२९. श्री सुरेन्द्र कुमार, रेवाड़ी २३०. श्री गिरधारी लाल वर्मा, सीकर २३१. श्री शोभालाल साहू, निम्बाहेड़ा २३२. श्री रामफल धुल, सोनीपत २३३. श्री उम्मेद सिंह आर्य, आगरा २३४. श्री शिवदत्त लाहोटी, कड़ैल, अजमेर २३५. श्री ब्रजलाल स्वामी, चुरु २३६. श्री मोहनलाल पंवार, नागौर २३७. आर्यसमाज देवलियाकलाँ, पाली २३८. आर्यसमाज कोटा २३९. श्री महावीर, करनाल २४०. आर्यसमाज मसूदा २४१. श्री देवव्रत शास्त्री, सोनीपत २४२. श्री महावीर सिंह आर्य, सोनीपत २४३. श्री यज्ञदेव व श्री जयदेव सोमानी, अजमेर २४४. श्री विशाल आर्य, अजमेर २४५. श्री आदर्श सरीन, दिल्ली २४६. आर्यसमाज अहमदाबाद २४७. श्री कैलाशचन्द गिरदावर, नसीराबाद २४८. श्री किशनलाल गहलोत,

जोधपुर २४९. श्री आदित्य कुमार शर्मा, आगरा २५०. श्री सुरेश कुमार, करनाल २५१. श्री बलवीर आर्य, करनाल २५२. श्री पूरणसिंह, आगरा २५३. श्रीमती मन्जु गुप्ता, अजमेर २५४. श्री गोपाललाल आर्य, सीकर २५५. श्री वेदप्रकाश आर्य, हिंडौन सिटी २५६. श्री हरिओम, आगरा २५७. आर्यसमाज विजयनगर २५८. श्री रामेश्वर जरावतिया, जोधपुर २५९. श्री लक्ष्मीनारायण चुन्नीलाल, जोधपुर २६०. श्री संजय गुप्ता, अजमेर २६१. श्री नन्हेलाल चन्द्रवंशी, बैतूल २६२. श्री दिनेश चन्द्रवंशी, बैतूल २६३. श्री मुकेश कुमार माहेश्वरी, पीसांगन, अजमेर २६४. श्री सत्यनारायण व श्री रवि माहेश्वरी, अजमेर २६५. श्री रामचन्द्र आर्य, सोनीपत २६६. श्रीमती रामेश्वरी देवी, सिरसा २६७. डॉ. राजपाल, रोहतक २६८. श्री सुरेन्द्र सिंह वर्मा, नई दिल्ली २६९. आर्यसमाज छोंकरवाड़ा, भरतपुर २७०. आर्यसमाज खेड़ली, अलवर २७१. श्रीमती स्नेहलता नरपतसिंह गहलोत, जोधपुर २७२. श्री जयसिंह, जोधपुर २७३. आर्यसमाज, सैक्टर १०, १०ए, गुरुग्राम २७४. श्री नयान कुमार आचार्य, बीड़ २७५. श्री राजेन्द्र विद्यावती दिवे, लातूर २७६. आर्यसमाज मन्दिर, सुरेन्द्रनगर २७७. श्री हिम्मत जी कस्तूर जी, अहमदाबाद २७८. श्री चन्द्रसुखी आर्य, कैथल २७९. श्री कमल सिंह आर्य, नोएडा २८०. श्री विजेन्द्रसिंह आर्य, नोएडा २८१. श्री शैलेष अमृत राव, बीदर २८२. श्री तेजसिंह, अजमेर २८३. श्री वेदप्रकाश आर्य, जयपुर २८४. श्रीमती दीपा दास, म्यांमार २८५. श्रीमती रूपा दास, म्यांमार २८६. श्री विजेन्द्र चौधरी, दिल्ली २८७. श्रीमती आराधना, अजमेर २८८. श्री मनोज माथुर, अजमेर २८९. जीव सेवा समिति, अजमेर २९०. आर्यसमाज कुचामनसिटी, नागौर २९१. श्री नवीन मिश्र, अजमेर २९२. श्री अनिल कुमार सिंह, बस्ती २९३. श्री अजीत सिंह नम्बरदार, रोहतक २९४. श्री सूरजभान सिन्धु, रोहतक २९५. श्रीमती कृष्णा देवी आर्य, रोहतक २९६. श्री रामदास आर्य, बरनाला २९७. श्री विजय कुमार आर्य, बरनाला २९८. श्री सतीश सिंधवानी, बरनाला २९९. श्री चन्द्र सिंह, रोहतक ३००. श्री सन्तोष बंसल, जालन्धर ३०१. श्रीमती सुशीला शर्मा, अजमेर ३०२. श्री अशोक पंसारी, अजमेर ३०३. दिल्ली नागरिक सहकारी बैंक, नई दिल्ली ३०४. श्री प्रद्युम्न, दिल्ली ३०५. श्री राजेश त्यागी, अजमेर ३०६. श्री हरनारायण चंडक, मुम्बई ३०७. श्री तपेन्द्र आर्य, जयपुर ३०८. श्री विश्वास पारीक, अजमेर ३०९. श्री बलराम एम. आशतिकरे, बीदर ३१०. श्री नरसिंह राव आर्य, बीदर ३११. श्री जगदीश प्रसाद आर्य, नागौर ३१२. श्री रामचन्द्र, मन्दसौर।

प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ है।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की विशेष व्यवस्था है।

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक की शास्त्री, आचार्य परीक्षा की तैयारी भी इस पाठ्यक्रम के माध्यम से हो जाती है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की निःशुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य विद्यादेव

आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान

पुष्कर रोड, अजमेर।

९८७९५८७७५६

आर्यसमाज स्थापना की शुद्ध तिथि

आचार्य विरजानन्द दैवकरणि

महर्षि दयानन्द सरस्वती का ध्येय सत्य को स्वीकारना व असत्य को छोड़ना ही रहा, क्योंकि यही उन्नति का मूल है, इसी के लिये ग्रन्थों का आलोडन-विलाडन किया जाता है। आर्यसमाज की स्थापना-तिथि के विषय में आचार्य विरजानन्द दैवकरणि का यह लेख सत्यासत्य के निर्णयार्थ ही प्रकाशित किया जा रहा है। वैदिक वाङ्मय के साथ-साथ माननीय दैवकरणि जी इतिहास एवं पुरातत्त्व के भी मर्मज्ञ हैं। आर्य जनता उनके लेख को पढ़कर आर्यसमाज की स्थापना तिथि के निर्धारण में सकारात्मक प्रतिक्रिया देगी ऐसी आशा है। -सम्पादक

संसार में प्रतिदिन सामान्य और विशेष घटनाएँ प्रतिदिन घटती रहती हैं, उन घटनाओं का, तिथि-तारीख, सन्, संवत् आदि के साथ गहरा सम्बन्ध होता है। यदि केवल घटना मात्र स्मरण रहे तो आगे चलकर यह सन्देह बना रहता है कि यह घटना कब घटी, सही तिथि के अभाव में कुछ व्यक्ति घटना को ही काल्पनिक मान लेते हैं। इसलिये प्रत्येक घटना के इतिहास के साथ उसके सही समय का निर्धारण होना भी अत्यावश्यक है।

जैसे भारत में ही लें-सृष्टि उत्पत्ति के विषय में भारतीय और पाश्चात्य लेखकों में विभिन्न मत प्रचलित हैं, इसी भाँति वेद के आविर्भाव का समय भी अनेक मान्यताओं के बीच लटकता रहता है। महाभारत युद्ध कब हुआ इस विषय में संसार के शोधकर्ताओं की १५ अलग-अलग मान्यतायें हैं। महावीर स्वामी कब हुए इस विषय में १४ मत हैं, महात्मा बुद्ध के विषय में भारत, लंका, चीन, जापान आदि में २३ मान्यतायें हैं। इसी प्रकार चन्द्रगुप्त मौर्य, चाणक्य, चन्द्रगुप्त द्वितीय, कालिदास, शंकराचार्य, वराहमिहिर, हर्ष, शूद्रक आदि भारत की महान् विभूतियों के विषय में एक सही तिथि का निर्धारण आज तक नहीं हो पाया है। इतिहास की सही तिथियों के श्लोक प्रमाण, कलि संवत्, युधिष्ठिर संवत्, शक संवत् आदि पुरातात्त्विक प्रमाणों की गलत ढंग से व्याख्या करने तथा भारतीय इतिहास को नवीनतम दिखाने के प्रयास भी इसमें मुख्य कारण हैं।

इसी प्रकार का विवादास्पद विषय आर्यसमाज का स्थापना दिवस भी है। यह अवस्था तो तब है, जबकि इसके संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती का स्वयं का लिखा हुआ पत्र तक विद्यमान है। सही तिथि विषयक प्रमाण एकत्र करके पं. युधिष्ठिर मीमांसक, पं. सत्यकेतु विद्यालंकार, पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति, पं. भगवद्दत्त रिसर्च स्कॉलर तथा स्वामी विद्यानन्द सरस्वती आदि शोधकर्ता आर्य विद्वानों ने पर्याप्त खोज और विवेचन करने के उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला है कि **आर्यसमाज की स्थापना मुम्बई में चैत्र शुक्ला पञ्चमी, संवत् १९३२ विक्रमी (गुजराती संवत् १९३१) तदनुसार १० अप्रैल १८७५ ई. शनिवार को हुई थी।** इतना होने पर भी आजकल प्रत्येक आर्यसमाज चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाता आ रहा है।

इस विषय में कुछ प्रमाण द्रष्टव्य हैं-

१. महर्षि दयानन्द सरस्वती ने श्री गोपाल राव हरि देशमुख को पत्र लिखा है-

मुम्बई में चैत्र शुद्ध ५ शनिवार के दिन संध्या के साढ़े पाँच बजते आर्यसमाज का आनन्दपूर्वक आरम्भ हुआ। ईश्वरानुग्रह से बहुत अच्छा हुआ। आप लोग भी वहाँ आरम्भ कर दीजिये। विलम्ब मत कीजिये। नासिक में भी होने वाला है।...डॉक्टर माणिक जी ने आर्यसमाज होने के लिए स्थान दिया है, परन्तु संकुचित है।...-संवत् १९३१ मिति चैत्र शुद्ध ६, शनिवार (परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा प्रकाशित महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार, भाग १, पृष्ठ ५७-५८, सम्पादक-डॉ. वेदपाल, सन् २०१५ ई.)

इससे पहले यही पत्र-व्यवहार पं. भगवद्दत्त जी तथा पं. युधिष्ठिर मीमांसक जी लाहौर और बहालगढ-रेवली सोनीपत से भी प्रकाशित कर चुके हैं।

२. आर्यसमाज की स्थापना वाले दिन १० अप्रैल १८७५ को 'टाइम्स ऑफ इण्डिया' अंग्रेजी समाचार-पत्र के प्रभात संस्करण में आर्यसमाज स्थापना की सूचना इस प्रकार प्रकाशित हुई थी-

"A meeting will be held at 5:30 PM today in the Girgam Back Road, in the bungalow belonging to Maneck ji Aderjee when Pt. Dayanand Sarwati will perform the ceremonies for formation of Arya Samaj. All well wishers of the cause are invited to attend" (P.3)

अर्थात्-आज सायं ५-३० बजे गिरगाँव बैक रोड पर स्थित डॉ. मानक जी के बंगले में एक मीटिंग होगी, जिसमें

पं. दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज की स्थापना करेंगे। सभी समान उद्देश्य वाले लोगों को इसमें सम्मिलित होने के लिए बुलाया गया है।

यदि स्थापना चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को हुई होती तो समाचार पत्र यह सूचना क्यों छापता?

इसी विषय में डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी पूर्व कुलपति गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार द्वारा प्रस्तुत उद्धरण पाठकों के ज्ञानवर्धन हेतु दिया जा रहा है। इसके पश्चात् आर्यसमाज की स्थापना तिथि हेतु कोई विवाद नहीं रहना चाहिए।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी लिखते हैं-''क्या समाचार-पत्र भी अपनी ओर से गलत कल्पना करके स्थापना को-दस दिन बाद बतायेगा? क्या स्वामी दयानन्द अपने पत्र में गलत सूचना देंगे? ऐसा संभव नहीं है। आर्यों ने यहाँ स्वामी दयानन्द को भी गलत बना दिया है।

३. आर्यसमाज की स्थापना के ११ मास पश्चात् माघ सं. १९३२ को बम्बई आर्यसमाज की ओर से 'श्री आर्यसमाजना नियमो' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई, उसके आरम्भ में लिखा है- 'श्री आर्यसमाज स्थापना, संवत् १९३१ (गुजराती) ना चैत्र शुद्ध ५ ने शनिवार।'

४. पं. लेखराम महर्षि की जीवन विषयक सामग्री की खोज के लिए बम्बई गये थे। उन्होंने अपनी खोज के आधार पर लिखा है-

''चैत्र सुदी ५, शनिवार सं. १९३२, तदनुसार १० अप्रैल सन् १८७५...शाम के समय, मोहल्ला गिरगाँव में डॉ. मानक जी के बगीचे में...उसी दिन में आर्यसमाज की स्थापना हो गई।''

५. पं. देवेन्द्रनाथ द्वारा रचित महर्षि के जीवन चरित में भी यही 'चैत्र शुक्ला पंचमी' तिथि अंकित है।

६. (पं. सत्यकेतु विद्यालङ्कार तथा पं. इन्द्र विद्यावचस्पति ने 'आर्यसमाज का इतिहास' में चैत्र शुक्ला पंचमी तिथि ही दी है।)

सन् १९४० तक चैत्र शुक्ला पंचमी को ही आर्यसमाज का स्थापना दिवस मनाया जाता था। उसके बाद कुछ भ्रान्तियों और कुछ दुराग्रहों के कारण 'चैत्र शुक्ला प्रतिपदा' को मनाया जाने लगा। बस, यहीं से भ्रान्ति और विवाद आरम्भ हुआ।

विवाद का आरम्भ- इस विवाद का प्रारम्भ इस प्रकार हुआ। हैदराबाद सत्याग्रह के समय सितम्बर १९३१ में स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी बम्बई के आर्यसमाज काकड़वाड़ी (गिरगाँव) में गये। वहाँ भवन पर लगे शिलालेख में उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना तिथि 'चैत्र सुदी १, सं. १९३१ (गुजराती), ७ अप्रैल, बुधवार सन् १८९५' अंकित देखी। उसके आधार पर उन्होंने सार्वदेशिक सभा दिल्ली को विचारार्थ लिखा। इस विषय पर सभा की १५-१२-१९४० की अन्तरंग में निर्णय किया गया कि स्थापना दिवस चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को मनाया जाये।

वस्तुतः यह शिलालेख बहुत बाद का है और किसी भ्रान्ति के आधार पर लिखा गया है। यह भी सन्देह होता है कि कहीं इसके मूल में नये आर्यों के मन में दिन को शुभ-अशुभ मानने के पौराणिक संस्कार तो नहीं हैं? जबकि चैत्र शुक्ला प्रतिपदा की तिथि महर्षि द्वारा स्वयं लिखित प्रमाण तथा अन्य प्रमाणों की तुलना में पूर्णतः अप्रामाणिक है। जिस भवन पर वह शिलालेख लगा है वह भवन भी बाद में बना है। कम से कम सन् १८७५ तक नहीं बना है। स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने अपनी आत्मकथा 'कल्याण मार्ग का पथिक' में सन् १८८७ में की गई बम्बई की पहली यात्रा का विवरण देते हुए आर्यसमाज गिरगाँव के विषय में लिखा है- ''आर्यसमाज मन्दिर का उन दिनों केवल चबूतरा ही बना हुआ था जिस पर मैंने व्याख्यान भी दिया।'' (पृष्ठ १४३) सन् १८९०-९३ के मध्य पं. लेखराम जी जब बम्बई गये और उसके बाद पं. देवेन्द्रनाथ जब गये, तब तक भी आर्यसमाज का भवन नहीं बना था।

पं. भगवद्दत्त जी का विचार है कि चैत्र सुदी प्रतिपदा को महाराष्ट्र में अवकाश होता है। जैसा कि आजकल भी कोई दिवस छुट्टी की सुविधा से कुछ दिन आगे-पीछे मना लिया जाता है, ऐसे ही अवकाश के कारण आर्यसमाज स्थापना दिवस प्रतिपदा को ही मनाया जाने लगा था। उसके बाद के लोगों को इसी दिन की भ्रान्ति हो गयी और शिलालेख में वही तिथि अंकित करा दी। **प्राप्त प्रमाणों के अनुसार चैत्र शुक्ला पंचमी शुद्ध तिथि है।** सार्वदेशिक सभा, प्रतिनिधि सभाओं तथा आर्यों को यही तिथि स्वीकार करनी चाहिए। अन्यथा, ऋषि दयानन्द के अनुयायी होकर उन्हीं को अमान्य सिद्ध करना है।

सार संक्षेप-

इस प्रकार अनेक पुष्ट प्रमाणों से यह सुतरां सिद्ध है कि आर्यसमाज की स्थापना चैत्र शुक्ला पंचमी को हुई थी, न कि चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को। अतः सत्य के ग्राहक सभी आर्यों और आर्यसमाजों को स्थापना दिवस की प्रचलित मान्यता में सुधार कर लेना चाहिये, अन्यथा लेख के आरम्भ में प्रदर्शित सृष्टि संवत् से लेकर शंकराचार्य आदि के कालक्रम की भाँति आर्यसमाज की स्थापना की तिथि विषयक मतभेद चलता ही रहेगा। आर्यसमाज का चतुर्थ नियम प्रत्येक आर्य को स्मरण रखकर इस उपर्युक्त सत्य को भी मान लेना चाहिये।

आर्ष गुरुकुल, झज्जर।

स्मृति शेष आचार्य डॉ. धर्मवीर के प्रति

धर्मवीर! हे धर्म प्रभाकर! अमर रहे तव कीर्ति महान्

पं. देवनारायण तिवारी ''निर्भीक''

मन में उठे आवेग मुख की भाव-भंगिमा को बदल ही देते हैं। कोई विरला ही होता है जो भावों के आवेगों को छुपा सके। सामान्य मनुष्य की पीड़ा वाणी से प्रकट हो जाती है पर कवि की पीड़ा उसकी लेखनी व्यक्त करती है। जब-जब इस संसार से किसी विभूति का प्रयाण हुआ, कवि की कलम ने तब-तब बाँध तोड़कर महाकाव्यों को जन्म दिया है और केवल एक बार नहीं, जब भी उस विभूति के अभाव की अनुभूति पीड़ा देती है तभी एक काव्य का सृजन होता है। यह कविता उसी पीड़ा का व्यक्त रूप है।- सम्पादक

युक्ति, प्रमाण, तर्कसङ्गत व्याख्यान अधर निर्झर झरता।
मधु मकरन्द मधुरिमामय रस तृप्ति लिए संतत बहता।।
विचलित होती कभी न वाणी ऋषि-सिद्धान्त पन्थ पर से।
झरता हो वेशन्त अलौकिक मानो मञ्जु सुधाकर से।। १।।

ऋजुता-प्रभा छिटकती क्षण-क्षण मधुर हँसी बन ले अवदात।
खेल-खेल में कह देते थे घोल अमृत-रस सीधी बात।।
धर्मवीरता धर्मवीर तव सदा विजयिनी रहती थी।
किञ्चित भी सिद्धान्तहीनता नहीं किसी की सहती थी।।२।।

धन्य हुई है धरा धारकर तव प्रतिपादित श्रुति-सिद्धान्त।
समाधान पाते थे क्षण में वैदिक पथ से भटके भ्रान्त।।
देश-विदेश कृतार्थ हुआ है तव प्रवचन की छाया से।
बहुतक पंथी श्रुति पथ-पाये, हटे अवैदिक माया से।। ३।।

सभा परोपकारिणी भी है धन्य हुई तुमको पाकर।
श्रद्धा-निष्ठा रही सरसती सरस धार शुचि बरसाकर।।
मैं भी धन्य हुआ हूँ कतिपय बार आप के दर्शन से।
विस्मृति होगी कभी न स्मृति तव मनोज्ञ आकर्षण से।।४।।

शुचि सम्पादन कला तथा सम्पादकीय का प्रेरक लेख।
पूर्ति असम्भव उसकी लगती देख चुका जो तव आलेख।।
सौम्य स्वभाव-शीलता, विद्या का मानो अनुपम अवदात।
कर एकत्र भरा था प्रभु ने जैसे तात तुम्हारे गात।। ५।।

अनुपमेय व्यक्तित्व आपका, तुम सम मात्र तुम्हीं थे तात।
आर्यजगत् के नभ आँगन में तव छवि थी ज्यों प्रभा-प्रभात।।
प्रतिभा-कलश भरा रहता था पूर्ण चन्द्र-चन्द्रिका समान।
काव्य कल्पना-सा प्रस्तुत रहता था वेद-शास्त्र का ज्ञान।।६।।

अविरल प्रज्ञा-धार प्रवाहित रहती लेकर भाव अथोर।
पीते थे विमुग्ध श्रोतागण अपनी सरस हृदय हिलकोर।।
क्या व्याख्यान-कला थी अद्भुत! कैसा सहज ज्ञान का कोष।
अल्पकाल में भी भर देते सबके चित्त आत्म-सन्तोष।।७।।

जो अवदान दिया है सुन्दर आर्यजगत् को तुमने मित्र।
अमिट रहेगी वह छवि प्यारी धूमिल होगा कभी न चित्र।।
है अभिलाषा यही हमारी अमर रहे तव कीर्ति महान्।
गायेगा 'निर्भीक' सदा युग, विमल तुम्हारे यश का गान।।८।।

आर्यसमाज, विधान सरणी, कोलकाता

नाम परिवर्तन

ऋषि उद्यान के श्री विजयसिंह गेहलोत ने वैदिक विधि-विधान से अपने पौराणिक नाम से वैदिक अग्निवचेश आर्य परिवर्तन कर लिया है। यह कार्य ऋषि उद्यान यज्ञशाला में आचार्य विद्यादेव के सान्निध्य में ४ दिसम्बर २०१८ को सम्पन्न हुआ।

पाठकों के विचार

अयोग्य व्यक्तियों के मनमाने बोल

सुखलाल आर्य

राजस्थान पत्रिका एवं अन्य समाचार-पत्रों में २२-१२-२०१८ को **नेताओं की जुबानी-कौन थे हनुमान्**- किसी ने जाट कहा, किसी ने दलित, इसी प्रकार ई.टी.वी. न्यूज राजस्थान/उत्तरप्रदेश पर भी ''महावीर पर महाभारत'' महाबहस सुनी-सारगर्भित निष्कर्ष कोई सामने नहीं आया। यह बवाल विगत विधानसभा चुनाव प्रचार के दौरान उत्तर प्रदेश के माननीय मुख्यमन्त्री योगी आदित्यनाथ के बयान कि हनुमान् जी दलित थे, तब से थम नहीं रहा। चौधरी लक्ष्मीनारायण मन्त्री, उ.प्र., बुक्कल नवाब एम.एल.सी. उ.प्र., शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती, गोपाल नारायण सिंह राज्यसभा सांसद आदि सबने अपने-अपने अनुमान से हनुमान् जी को कई जातियों में लपेटने का कथन किया, जिससे ऐसा लगा कि ये लोग पुराणों के गुलाम वर्तमान समय परिस्थिति के अनुसार बखान करते हैं जबकि महावीर हनुमान् का जन्मकाल विगत ९ लाख वर्ष पुराना रामायण काल के समकालीन है। यदि उपर्युक्त कथन कर्तागण आर्ष सद्ग्रन्थों का पठन-अध्ययन करते तो सत्य के निकट होते- लेकिन ऐसे कथनों से इनको ज्ञानहीन आर्यों की श्रेणी में रखा जा सकता है।

प्राचीन आर्यावर्त देश इस भारतवर्ष का ही नाम है। तत्समय इसमें देवराष्ट्र आर्य-राष्ट्र, वानर-राष्ट्र, नागराष्ट्र एवं असुर-राष्ट्र इस प्रकार ५ राष्ट्र थे। वानर-राष्ट्र आन्ध्रप्रदेश का कुछ भाग, मद्रास व उत्कल प्रदेश तक था। वानर-राष्ट्र का राजा बाली था, उसकी राजधानी किष्किन्धा नगरी थी। उसके अधीन महेन्द्रपुर और रतनपुर की रियासत थी। हनुमान् जी के दादा 'प्रह्लाद राय विद्याधर' और उनकी महारानी 'केतुमती' रतनपुर में रहते थे। इनके पुत्र का नाम 'केसरी पवन कुमार' था, यह महर्षि अगस्त्य के आश्रम में पढ़े थे। ये पक्षियों की आवाज भी बोल लेते थे। केसरी पवन कुमार का विवाह महेन्द्रराय की सुपुत्री 'अञ्जनि' के साथ हुआ था। विवाहोपरान्त केसरी पवन कुमार ने अञ्जनि के साथ पुत्रोत्पन्न के लिये १२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य व्रत रखने की प्रतिज्ञा की थी, वह पूर्ण होने पर बाली एवं रावण का कुबेर के साथ जारी युद्ध की अवधि के अन्दर ही केसरी पवन कुमार ने रात्रि पड़ाव के दौरान चकवी के विरह की आवाज अपने नर चकवे के सम्बन्ध में सुनी तो इनको अञ्जनि के साथ की गई प्रतिज्ञा याद आई और रात्रि में सेना पड़ाव को छोड़कर विमान द्वारा रतनपुर आकर अञ्जनि से सम्पर्क किया एवं अञ्जनि को अपनी स्वर्ण मुद्रिका (अंगूठी) बतौर निशानी देकर वापस युद्धरत हो गये। अतः हनुमान जी केसरी पवनकुमार अञ्जनि के पुत्र थे, उन्होंने भी महर्षि अगस्त्य के आश्रम में वेद-वेदाङ्ग एवं योग की शिक्षा प्राप्त की थी, इनकी वास्तविक विशेषताऐं जानने के लिये विशुद्ध वाल्मीकि रामायण का ध्यानपूर्वक पठन व मनन आवश्यक है। हनुमान् जी का विवाह किष्किन्धा के शासक बाली के छोटे भाई सुग्रीव की पुत्री पद्मरागा से हुआ था जिससे उनके एक पुत्र मकरध्वज उत्पन्न हुआ जो अहिरावण का हनुमान् जी द्वारा वध करने के बाद अमेरिका का राजा बना।

अब बात आगे बढ़ाते हैं कि हनुमान् जी दलित भी नहीं थे और राम के सेवक या दास भी नहीं थे, बल्कि बचपन में राम के साथ पढ़े भी थे और अन्तर्राष्ट्रीय शासकों के बीच आज भी जो संधि होती है उसी प्रकार सुग्रीव की पत्नी को बाली द्वारा बलात् छीनने एवं राम की पत्नी सीता को रावण द्वारा अपहरण कर ले जाने पर दोनों पक्षकारों की व्यथाएँ समान होने से उनका समाधान करने हेतु राम लक्ष्मण+सुग्रीव हनुमान ने आपस में संधि की। बाली का वध कर सुग्रीव का राज्याभिषेक किया। उपर्युक्त कर्त्तव्यों के आधार पर हनुमान् जी वानर राष्ट्र से सम्बन्धित क्षत्रिय थे। हनुमान् जी बन्दर नहीं थे। उनकी पूँछ भी नहीं थी क्योंकि उनके माता-पिता अञ्जनि एवं पवन केसरी दोनों मनुष्य बिना पूँछ वाले थे, मूर्खों ने हनुमान् जी को पूँछ लगाकर वानर से बन्दर घोषित कर दिया।

कथन अधिक विस्तृत न हो इसलिये मुख्य-मुख्य तत्थ्यात्मक बातें इसमें सम्मिलित की गई हैं एवं इसी आधार पर हनुमान् जी 'क्षत्रिय' थे, परन्तु राजपूत नहीं थे।

प्रतिनिधि सभा राजस्थान, राजापार्क, जयपुर-४

प्रतिक्रिया

श्रीमान् सम्पादक जी, नमस्ते!

परोपकारी अंक अगस्त द्वितीय में आपका सम्पादकीय 'असहिष्णुता! कुछ कारण और विचार' पढ़ा। इस लेख में आपने असहिष्णुता के नाम पर मुसलमानों के विरुद्ध हिन्दुओं का षड्यन्त्र बताकर अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भारत को बदनाम करने में मुसलमानों, कम्युनिस्ट, काँग्रेस तथा इन्हें समर्थन देने वाले बुद्धिजीवी व अन्य राजनीतिक दलों की पोल खोली है, साथ ही पूर्व उपराष्ट्रपति द्वारा बहुसंख्यक समाज को कोसना एवं कश्मीर की पूर्व मुख्यमन्त्री के सहयोगी सांसद को देश के विभाजन की धमकी पर प्रकाश डालकर सराहनीय कार्य किया है।

'कुछ तड़प-कुछ झड़प' लेख में आदरणीय जिज्ञासु जी द्वारा 'अन्धविश्वास और हिन्दू' शीर्षक के माध्यम से सभी सम्प्रदायों में व्याप्त घोर अन्धविश्वास के माध्यम् से महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत कर सर्वसाधारण की आँखें खोल दी हैं।

पूज्य दादा बस्तीराम जी द्वारा विरोधियों द्वारा 'ओ३म् किस धातु से बना है' पर जो प्रति उत्तर दिया गया है वह निश्चय ही सभी आर्यों को स्मरण रहेगा।

श्री रामनिवास 'गुणग्राहक' जी का लेख 'कल्याण की देवी शिवदेवी' के चरित्र को प्रकाश में लाने का कार्य उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना 'साकेत' के रचयिता राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त द्वारा 'उर्मिला' के त्याग को महत्त्व प्रदान किया गया है। स्वामी श्रद्धानन्द जी ने 'कल्याण मार्ग का पथिक' में यद्यपि शिवदेवी जी के विषय में पर्याप्त स्थान दिया है, परन्तु फिर भी अधिकांश आर्यसमाजी इससे अनभिज्ञ ही हैं।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी का लेख पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति के सम्पूर्ण जीवन पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालता है। जो गागर में सागर समाने के समान है।

मैं परोपकारी पत्रिका की बेसब्री से प्रतीक्षा करता हूँ। प्राप्त होते ही प्रयास करता हूँ अतिशीघ्र ही सम्पूर्ण पत्र पढ़ लिया जाय। पत्रिका सभी प्रकार से उपयोगी है जो पठनीय ही नहीं अपितु संग्रहणीय भी है।

आपके प्रयास की भूरि-भूरि प्रशंसा और आपको बधाई। शुभकामनाओं सहित। -वेदारीलाल आर्य

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. २७ फरवरी, २०१९ - **परोपकारिणी सभा का स्थापना दिवस**

२. ०१ से ०३ मार्च, २०१९ - **वार्षिकोत्सव जमानी आश्रम, इटारसी,** सम्पर्क- ०७५०९७०६८२८

३. १९ से २६ मई, २०१९ - **आर्यवीर दल शिविर**

४. ०२ से ०९ जून, २०१९ - **आर्य वीराङ्गना शिविर**

५. १६ से २३ जून, २०१९- **योग-साधना शिविर**

६. १३ से २० अक्टूबर, २०१९- **योग-साधना शिविर**

७. ०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९- **ऋषि मेला**

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३

मृत्युञ्जय स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

पूज्यपाद, वीतराग, महाबलिदानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज पर लेखक का बड़ा संशोधित और परिवर्द्धित ग्रन्थ 'लौहपुरुष' प्रेस में जा चुका है। मार्च तक छप जाने की सम्भावना है। उनके जन्म दिवस पर क्या लिखूँ और क्या न लिखूँ? यह लेखक बी.ए. में पढ़ता था तब सिख बन्धुओं के दैनिक पत्र 'प्रभात' या 'अजीत' में एक लेख में यह षढ़ा था, ''सिखों के पास सब कुछ है, परन्तु एक स्वामी स्वतन्त्रानन्द नहीं है।'' इसे दुर्भाग्यपूर्ण बताया गया। तब महाराज जीवित थे।

यह सन् १९६० के अन्तिम महीनों अथवा सन् १९६१ के आरम्भिक महीनों की बात है, यह सेवक दिल्ली से हिसार आ रहा था। उसी बस में गो-रक्षक देशसेवक लाला हरदेव सहाय जी यात्रा कर रहे थे। वह विनीत से स्नेह करते थे। उनके पास की सीट खाली हुई तो वहाँ जाकर उनका साक्षात्कार लेना आरम्भ कर दिया। एक प्रश्न के उत्तर में लाला जी ने कहा, ''देश- जाति का दुर्भाग्य है कि आज हमारे पास स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज सरीखा शूरवीर और प्रतापी नेता नहीं है। आगे बोले, उनके पश्चात् आर्यसमाज ने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी जैसा महाबलिदानी संन्यासी दिया। आज हिन्दू समाज के पास, देश के पास उन जैसा प्राणों का निर्मोही और दूरदर्शी नेता एक नहीं है।''

रामाँ मण्डी (पंजाब) के पास एक कमालू ग्राम है। वहाँ एक आर्य प्रभुभक्त महात्मा रहते थे। वे क्षेत्र के लोगों को 'एक प्रभु जिसका निज नाम ओ३म् है' की उपासना करने तथा दुर्व्यसनों, मांस, मदिरा से बचने का उपदेश दिया करते थे। हिन्दू सिख उस क्षेत्र में उनके बड़े भक्त, प्रशंसक थे।

'लौह पुरुष' ग्रन्थ लिखा जा रहा था तब वानप्रस्थी ओ३म् प्रकाश जी से कहा, आप कृपया कमालू वाले महात्मा जी के पास जाकर पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज के संस्मरण ला दें। उन्होंने जाकर कहा, महाराज! स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी विषयक आपके संस्मरण जिज्ञासु जी ने माँगे हैं।

सरल तरल हृदय के तपस्वी आर्य महात्मा बोले, ''आर्यसमाज के लोग स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज की महानता को क्या जानें? इन्हें तो यही पता है कि जहाँ लूम्ब लगे (अर्थात् आगे भड़के-विपदा आये) वहाँ-वहाँ स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज को आगे कर दो। विजय प्राप्त होगी। स्वामी जी कैसे उपासक, प्रभु-भक्त, योगी, मुनि, मनस्वी और वीतराग थे। यह आर्यसमाजियों को क्या पता? हमने उनसे क्या-क्या सीखा? यह एक लम्बी कहानी है। वे महीनों स्वाध्याय, आत्मचिन्तन व योग-साधना में, एकान्त में हम जैसे शिष्यों को साथ लेकर ग्रामों में रहे।'' वैदिक सिद्धान्तों, वेद, आर्ष-ग्रन्थों व मत-पंथों पर आपका असाधारण अधिकार था। विद्या का, जप, तप, साधना, योगाभ्यास व अपनी उपलब्धियों का लेश मात्र भी उन्हें अभिमान नहीं था।

वे अपने सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक युवक को देश, धर्म व जाति-सेवा के पाठ पढ़ाने, उनका जीवन-निर्माण करने के चतुर और कुशल शिल्पी थे। एक बार उनके चरणों में यह सेवक बैठा हुआ था। पूछा, ''आज-कल क्या पढ़ रहे हो?''

कहा, ''महाराज! पं. चमूपति का जी का 'चौदहवीं का चाँद', 'दयानन्द आनन्द सागर', तथा उपाध्याय जी की कुछ हिन्दी अंग्रेज़ी पुस्तकों का बार-बार अध्ययन हो रहा है और आप के 'आर्यसमाज के महाधन' को भी सुरुचि से पढ़ा है।''

कुछ प्रश्न पूछकर बोले, ''आर्यसमाज के महाधन पुस्तक कैसी लगी?''

आज अपने उत्तर का स्मरण करके अपनी मूर्खता, अनाड़ीपने पर पछताता हूँ और उनके बड़प्पन पर गौरव होता है। वे कितने महान् थे! उनकी शान का क्या कहना! कहा, ''महाराज! आप कोई पं. चमूपति जैसे लेखक थोड़े हैं। पुस्तक तो प्रेरक, उत्तम व ज्ञानवर्द्धक है, परन्तु आपकी लेखन-शैली तो वही है जैसी भाषण शैली और आपके उपदेश-व्याख्यानों की शैली भी आपकी वार्तालाप-शैली जैसी है।''

पाठक यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि मेरे इस मूर्खतापूर्ण उत्तर को सुनकर उनका हावभाव यथापूर्व रहा। किञ्चित् इन रुखे शब्दों पर बुरा नहीं मनाया। जो पुस्तकें उन दिनों पढ़ीं उन पर कुछ प्रश्न पूछे। जो उत्तर दिये उन्हें सुनकर बहुत प्रसन्न हुये। आशीर्वाद दिया और प्रोत्साहन दिया। यही तो बड़ों का बड़प्पन है।

वे छोटे से छोटे समाजसेवी को उठाते, बनाते व आगे

बढ़ाते थे। राजकोट आर्यसमाज उनकी सुविधा को देखकर उनकी दी हुई तिथियों पर ही उत्सव किया करती थी। अपने जीवन की साँझ में जब अन्तिम बार आप उस समाज के उत्सव पर गये तो पंजाब सभा के कई मान्य उपदेशक व भजनीक भी गये। सबको एक ही भवन में ठहराया गया। उन दिनों सब आर्यसमाजी उठते-बैठते धर्म प्रचार व शास्त्रार्थों की ही चर्चा किया करते थे।

महाशय कृष्ण जी के कादियाँ में दिये गये भाषण पर मिर्ज़ाइयों ने कादियाँ से निकलने वाले अपने साप्ताहिक 'बदर' में एक आपत्तिजनक सम्पादकीय टिप्पणी दी। श्रद्धेय पं. त्रिलोकचन्द्रजी शास्त्री की आज्ञा व प्रेरणा से इस विनीत ने 'बदर' में जो लिखा गया उसके प्रतिवाद में 'कादियानी करवटें' शीर्षक से एक लेखमाला दी। जिसकी दो मणियाँ थीं। यह लेख बहुत खोजपूर्ण व जोशीली भाषा में थे। मिर्ज़ाइयों की नींद उड़ा दी। वहाँ उपदेशकों में इस लेखमाला की चर्चा चली। सबने लेखक स्वाध्याय, शैली व साहस की भूरि-भूरि प्रशंसा की। स्वामी जी महाराज बहुत ध्यान से उपदेशक मण्डली की बात सुनकर अपनी स्वाभाविक गम्भीर शैली में बोले, "कोई आर्यसमाज पर, वैदिक धर्म पर और ऋषि दयानन्द पर वार करे तो हो नहीं सकता कि 'जिज्ञासु' चुप करके बैठे। यह लेखनी व वाणी से खरा-खरा उपयुक्त उत्तर देगा।"

आर्यसमाज के सर्वोच्च सेनानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के ये शब्द इस सेवक तक पहुँच गये। माननीय पं. ओम् प्रकाश जी वर्मा वहीं थे। महाराज के इन शब्दों ने इस विनीत को उठाने, बनाने व आगे बढ़ाने में एक टॉनिक (Tonic) का जो काम किया उसको शब्दों में नही बताया जा सकता।

महात्मा आनन्द स्वामी गुरदासपुर आये तो उन्हें स्वामीजी के रुग्ण होने का पता चला। महात्मा जी ने कहा, "स्वामी जी पता चला कि आप कुछ अस्वस्थ हैं।"

बोले, "कुछ ऐसा ही है।"

महात्मा जी ने कहा, "आप ठीक हो जायेंगे।"

स्वामी जी ने उत्तर में कहा, ठीक न हुआ तो क्या। शरीर का धर्म यही है। मौत से क्या डरना। ऐसा ही स्वामी सत्यानन्द जी को उत्तर दिया। पं. प्रकाशवीर जी शास्त्री ने भी ऐसे कहा, आप तो सदा मैच में विजयी ही रहे हैं। अब भी रोग को पछाड़ देंगे। बोले, "नहीं, अब तो रैफरी ने आउट कर दिया। जो जन्मा है सो अवश्य मरेगा। मरने से क्या डरना।"

लोहारु हत्याकाण्ड में दानव दल आप पर टूट पड़ा। सिर पर कुल्हाड़ा मारा गया। गहरा घाव हुआ। आर्य नेता आपको इर्विन अस्पताल ले गये। डॉक्टर क्लोरोफार्म सुंघाकर टाँके लगाने लगा तो आपने कहा, इसकी क्या आवश्यकता? जीवन भर मन को साधने, वशीकरण करने की बात कहते रहे। सुख-दुःख का भान मन से होता है आज देखेंगे कि हमने मन को कितना साधा है। बड़े गहरे लम्बे घाव के उपचार में पर्याप्त समय लगा। महाराज ने एक बार भी 'आह' का शब्द मुख से न निकाला। उन जैसे धीरजधारी आज कहाँ हैं? वे कितने बड़े उपासक व योगी थे, यह उसका एक प्रमाण है।

भारत छोड़ो आन्दोलन में जब शाही किला लाहौर में आपकी भयङ्कर पूछताछ हो रही थी तो पूछा गया, "जगदेव सिंह सिद्धान्ती को जानते हो?"

आर्यसमाज के महान् संन्यासी नेता और योगी ने कहा, "मैं उसे नहीं जानता।"

इतना बड़ा झूठ अपने एक गृहस्थी समाजसेवी भक्त की रक्षा के लिये बोला अन्यथा सिद्धान्ती जी को यातनायें सहनी पड़तीं।

जब पूछा कि युद्ध-भूमि में अंग्रेज़ी सेना व शत्रु सेना के लिये आपने ये शब्द कहे क्या? आपने कहा, हाँ कहे थे। अपने आपको सदा अग्नि-परीक्षा के लिये आगे करने में तत्पर रखा।

उपाध्याय जी ने लिखा है जब सहस्रों वीर हैदराबाद की जेलों में चले गये तो उनको जेल भेजकर आप छटपटा रहे थे। आपने सार्वदेशिक सभा को कहा, "मैं अब बाहर नहीं रह सकता। सत्याग्रह का संचालन कोई और करे। मैं जेल जाऊँगा। श्री रघुनाथ प्रसाद जी ने हमें बताया कि स्वामी जी के इस निश्चय से सब आर्य नेता हिल गये। उन जैसा संचालक सेनापति कहाँ से लायें? तब महात्मा नारायण स्वामी जी की वसीयत जो वे जेल जाने से पहले लिखकर गये वह उन्हें याद करवाई गई। उसमें लिखा था कि स्वामी स्वतन्त्रानन्द किसी भी अवस्था में जेल नहीं जा सकेंगे। महात्मा जी के लिखित आदेश का ध्यान कराके आपको अपना निर्णय बदलना पड़ा। वे महाबली बलिदानी ऐसे अनुशासन प्रिय थे।"

उस महान् यतिराट् के जीवन की एक-एक घटना प्रेरणाप्रद, शिक्षाप्रद व गौरवपूर्ण है।

सिर पर सहे कुल्हाड़े। स्वामी वे थे हमारे।।

नई सूर्यनगरी, वेद सदन, अबोहर, पंजाब

आर्यजगत् के समाचार

१. **वार्षिक महोत्सव**- गुरुकुल हरिपुर, जुनानी, जि. नुआपाड़ा, ओडिशा का नवम वार्षिक महोत्सव दि. २६ से २८ जनवरी २०१९ को देश के लब्धप्रतिष्ठित विद्वानों, साधु-सन्तों एवं श्रद्धालु आर्यजनों की पावन उपस्थिति में सम्पन्न होने जा रहा है। कार्यक्रम में सम्मिलित होकर इसे सफल बनाने में सहयोग करें।

२. **वार्षिकोत्सव सम्पन्न**- आर्यसमाज गोमती नगर, लखनऊ, उ.प्र. का वार्षिक उत्सव ११ नवम्बर २०१८ को श्रीमती शैलजा के ब्रह्मत्व में धूमधाम से सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम में डॉ. निष्ठा विद्यालंकार, श्री दीनानाथ शास्त्री, भजनोपदेशक श्री सत्यप्रकाश, जिला समाज के अध्यक्ष श्री नवजोत निगम आदि उपस्थित रहे।

३. **चतुर्वेद पारायण यज्ञ**- आर्यसमाज मोहननगर, हिण्डौनसिटी, जि. करौली, राज. द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार एवं विश्व कल्याण की भावना से ३५वें चतुर्वेद पारायण यज्ञ का भव्य आयोजन आचार्य हरीशचन्द शास्त्री-भरतपुर के ब्रह्मत्व में आर्ष कन्या गुरुकुल भुसावर की ब्रह्मचारिणियों द्वारा सस्वर वेदपाठ दि. १ से ३० दिसम्बर २०१८ तक किया गया। इस महायज्ञ के अवसर पर ईश्वर, जीव, प्रकृति, कर्मफल, पुनर्जन्म, यज्ञ, संस्कार, धर्माधर्म, सत्यासत्य, कर्त्तव्याकर्त्तव्य और ईश्वर की वाणी वेद का उपदेश किया गया।

४. **वार्षिकोत्सव**- गुरुकुल आमसेना द्वारा आगामी १६ से १८ फरवरी २०१९ को ५१वाँ वार्षिक महोत्सव समारोहपूर्वक मनाया जा रहा है। इस पावन पर्व पर सभी आर्यजन सादर आमन्त्रित हैं।

५. **वार्षिकोत्सव मनाया**- महर्षि दयानन्द सरस्वती वैदिक साधु आश्रम, जघीना गेट सरकुलर रोड का २८वाँ वार्षिक उत्सव २० से २२ नवम्बर २०१८ को सोल्लास मनाया गया। कार्यक्रम में आचार्य चन्द्रदेव शास्त्री-फर्रुखाबाद, देशराज शास्त्री-सूरोता, उमेश कुलश्रेष्ठ-आगरा, रामगोपाल आर्य-जावरा व सुश्री प्रियंकादेव भारती-भुसावर के प्रवचन हुए।

६. **प्रतिस्पर्धा आयोजित**- गुरुकुल गौतमनगर, दिल्ली में महर्षि दयानन्द वैदिक गुरुकुल परिषद् द्वारा ८ व ९ दिसम्बर २०१८ को अष्टाध्यायी, धातुपाठ, शास्त्रार्थ विचार, त्रिभाषी कोष एवं वैदिक सिद्धान्त आदि विषयों पर शास्त्रीय प्रतिस्पर्धा आयोजित की गई। अष्टाध्यायी प्रतिस्पर्धा में ३५ प्रतिभागी थे, जिसमें आर्य कन्या गुरुकुल शिवगंज, जि. सिरोही, राज. की ३ ब्रह्मचारिणियों ने ५-५ हजार रु. के पुरस्कार प्राप्त कर प्रथम स्थान प्राप्त किया। धातुपाठ में ३० प्रतिभागी थे, जिसमें शिवगंज गुरुकुल की २ ब्रह्मचारिणियों ने ४-४ हजार रु. के पुरस्कार प्राप्त कर प्रथम स्थान प्राप्त किया।

७. **श्रद्धाञ्जलि समारोह**- २३ दिसम्बर २०१८ को साप्ताहिक अधिवेशनों में नगर के विभिन्न आर्यसमाजों में अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द को श्रद्धांजलियाँ अर्पित हुईं। आर्यसमाज मानसरोवर, जयपुर, राज. में डॉ. मुरारीलाल पारीक एवं डॉ. सुमित्रा आर्या ने स्वामी जी के साहस व कृतित्व पर विशुद्ध प्रकाश डाला। उन्हे अदम्य साहस का धनी व सेनानी परिभाषित किया।

८. **वार्षिकोत्सव मनाया**- आर्यसमाज लल्लापुरा, वाराणसी, उ.प्र. का २१ से २४ दिसम्बर २०१८ को चार दिवसीय ८२वाँ वार्षिकोत्सव काशी अग्रहरी सभा में समारोहपूर्वक मनाया गया। समारोह का प्रारम्भ पाणिनी कन्या महाविद्यालय, वाराणसी की छात्राओं द्वारा यज्ञ हवन से हुआ। गाजियाबाद के गुरुकुल तातारपुर महाविद्यालय से आचार्य डॉ. ओमव्रत, मिर्जापुर से पं. रामआधार शास्त्री, देहदानी स्वामी राजेन्द्र योगी के उद्बोधन हुए। महिला सम्मेलन की अध्यक्षता डॉ. गायत्री आर्या ने की। मुख्य वक्तृ पा.क.म.वि. की आचार्या विद्याकिरण शास्त्री थीं। संगोष्ठी के मुख्य अतिथि डॉ. मुक्ता थीं। डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री-अमेठी, प्रो. प्रभुनाथ द्विवेदी, डॉ. अशर्फीलाल शास्त्री, श्री सोमेन्द्र आर्य आदि के प्रवचन हुए। समारोह का संचालन प्रधान सी.ए. विष्णुप्रसाद द्वारा किया गया।

चुनाव समाचार

०९. **आर्यसमाज कल्याण नगर, मेरठ, उ.प्र.** के चुनाव में **प्रधान**- श्री यज्ञपालसिंह चौहान, **मन्त्री**- श्री शिवकुमार सिंह राणा, **कोषाध्यक्ष**- श्रीमती मधु सिंघल को चुना गया।

१०. **आर्यसमाज लाडनूँ, जि. नागौर, राज.** के चुनाव में **संरक्षक**- श्री रामचन्द्रसिंह आर्य **प्रधान**- श्री सूर्यप्रकाश आर्य, **मन्त्री**- श्री जगजीतसिंह आर्य, **कोषाध्यक्ष**- श्री पूनमचन्द मारोठिया को चुना गया।

११. **जिला आर्य उप प्रतिनिधि सभा, जि. नागौर, राज.** के चुनाव में **प्रधान**- श्री किशनाराम आर्य-बिल्लू, **मन्त्री**- श्री यशमुनि आर्य-परबतसर, **कोषाध्यक्ष**- श्री गजेन्द्र परिहार आर्य-कुचेरा को चुना गया।

शोक समाचार

१२. वैदिक संस्कारों से ओतप्रोत परम ऋषिभक्त **श्री वृद्धिचन्द** का विगत १९ नवम्बर २०१८ को निधन हो गया। राजस्थान जयपुर की आर्यसमाजों में सक्रिय आर्य श्री वृद्धिचन्द्र जी आर्यसमाज कृष्णपोल बाजार जयपुर के सदस्य थे। अन्तिम संस्कार संस्कार विधि की व्यवस्थानुसार सम्पन्न हुआ। वैदिक संस्थाओं को आर्थिक योगदान में उनकी सदैव रुचि रही। परोपकारिणी सभा दिवंगतात्मा को सादर श्रद्धाञ्जलि।

ऋषि मेला २०१८ के अवसर पर

सभा के अधिकारियों एवं अतिथि विद्वानों द्वारा परोपकारिणी सभा की नई वेबसाइट का विमोचन

परोपकारिणी सभा के 'वैदिक पुस्तकालय' द्वारा प्रकाशित
- महर्षि दयानन्द सरस्वती कृत 'संस्कृत वाक्य प्रबोध' एवं
- डॉ. वेदपाल (प्रधान, परोपकारिणी सभा) द्वारा लिखित 'शङ्का समाधान' पुस्तकों का विमोचन

श्री कन्हैयालाल आर्य (मन्त्री, परोपकारिणी सभा) द्वारा लिखित पुस्तक 'मृत्यु का स्वरूप' पुस्तक का विमोचन।

परोपकारिणी सभा के 'वैदिक पुस्तकालय' द्वारा प्रकाशित पं. लेखराम कृत 'कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर' पुस्तक का विमोचन।

आर जे/ए जे/80/2018-2020 तक प्रेषण : १५-१६ जनवरी २०१९ आर.एन.आई. ३९५९/५९

जन्म- पौष पूर्णिमा सं. १९३४ वि. तदनुसार ११ जनवरी १८७७ ई.

स्वामी स्वतन्त्रानन्द सरस्वती

मृत्यु- चैत्र शुक्ला एकादशी सं. २०१२ वि. तदनुसार ३ अप्रैल १९५५ ई.

प्रेषक:

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज,

अजमेर (राजस्थान) ३०५००१